साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र

खेती संदेश

मूल्य : 6/- रुपए

WEEKLY KHETI SANDESH

All Subject to Patiala Jurisdiction.

E-mail : khetisandesh2025@gmail.com

RNI Regd. No. PBBIL/25/A0210 • Chief Editor : Parminder Kaur • Issue Dt. 01-09-2025 • Vol.1 No.2 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • Mob. 90410-14575 • Page 12

उत्तर भारत के बाद, दक्षिण भारत में भी प्रतिकूल मौसम के कारण कपास की फसलों पर कीटों का हमला

उत्तर भारत के बाद, दक्षिण भारत में कपास की फसलें अब असामान्य मौसम के कारण गंभीर कीट प्रकोप से जूझ रही है, जिससे पैदावार कम होने और देश के कुल कपास उत्पादन में और गिरावट की आशंकाएं बढ़ गई है।

लंबे समय तक चले मानसून और अगस्त में उच्च आर्द्रता के कारण आंध्र प्रदेश के कपास के खेतों में 'गोलक सड़न' रोग में वृद्धि हुई है। विशेषज्ञों के अनुसार, इस वर्ष का प्रकोप हाल के वर्षों की तुलना में अधिक गंभीर है, और वैज्ञानिक केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान (सी.आई.सी.आर.) द्वारा सुझाए गए एकीकृत कीट प्रबंधन उपायों की सिफारिश कर रहे हैं।

सरकार की परियोजना बंधन के तहत एक क्षेत्र सर्वेक्षण में पाया गया कि 'गोलक सड़न' नम परिस्थितियों में पनप रही है, खड़ी फसलों को नुकसान पहुंचा रही है और खरीफ 2025-26 के किसानों के लिए उपज में कमी, रेशे की गुणवत्ता में गिरावट और आर्थिक तनाव की चिंताएं पैदा कर रही हैं। यह सर्वेक्षण दक्षिण एशिया जैव प्रौद्योगिकी केंद्र (एसएबीसी), जोधपुर द्वारा केवीके (कृषि विज्ञान केंद्र) बनवासी के सहयोग से किया गया था और कुरनूल तथा रायलसीमा के अन्य कपास उत्पादक क्षेत्रों में इसके व्यापक प्रसार की पुष्टि की गई थी।

कपास महामारी विज्ञानी और एसएबीसी की अध्यक्ष डॉ. सी. डी. माई ने कहा, "एक दशक में पहली बार, कुरनूल जिले में बॉल रॉट का आर्थिक सीमा स्तर 20 प्रतिशत के गंभीर प्रकोप के निशान को पार कर गया है।" माई ने आगे कहा कि इस बीमारी को लंबे समय से दक्षिण-मध्य भारत में कपास के लिए सबसे अधिक आर्थिक रूप से हानिकारक माना जाता रहा है।

आईसीएआर-केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान के पूर्व प्रमुख डॉ. दिलीप मोंगा ने बताया कि लगातार बारिश ने बॉल रॉट की गंभीरता को और बढ़ा दिया है, और हाल के वर्षों में लीफ स्पॉट के मामले भी बढ़े है। किसानों को स्थायी नियंत्रण के लिए संयुक्त कृषि पद्धतियों, संतुलित फसल पोषण, रोगनिरोधी उपायों और एकीकृत कीट प्रबंधन को अपनाने की सलाह दी गई है।

आंध्र प्रदेश भारत के कपास उत्पादन में लगभग 10 प्रतिशत का योगदान देता है, जिसमें कुरनूल एक प्रमुख केंद्र है। यह प्रकोप उत्तर भारत के किसानों द्वारा पंजाब, हरियाणा और राजस्थान में लीफहॉपर (जैसिड) के संक्रमण की सूचना देने के कुछ ही हफ्तों बाद आया है।

किसानों की परेशानी को और बढ़ाते हुए केंद्र सरकार ने हाल ही में कपास पर 11 प्रतिशत आयात शुल्क हटा दिया है, जिससे अमेरिका से कपास का आयात सस्ता हो गया है।

मूंगफली की खेती - सरकारी फार्म में तीन एकड़ में प्रयोग शुरू, विविधीकरण का विकल्प बनेगी

मोगा में 'गिरनार-4' की बुवाई अक्तूबर में पकेगी

मोगा ज़िले के किसान अब धान-गेहूं के फसल-चक्र से बाहर निकलकर एक नई और मुनाफे वाली फसल की ओर देख सकते हैं। ज़िले में पहली बार मूंगफली की खेती शुरू की गई है।

इस खेती के लिए हल्की बलुई दोमट और बलुई दोमट मिट्टी सर्वोत्तम होती है, जिसमें जल निकासी अच्छी होनी चाहिए। मोगा में कहीं-कहीं इस प्रकार की मिट्टी मिलती है। इस खेती के लिए गर्म और नम जलवायु आदर्श होती है, जहां तापमान 20 से 30 डिग्री सैल्सियस के बीच हो और बारिश (500-1000 मिलीमीटर) के साथ अच्छी जल निकासी वाली ज़मीन हो।

ज़िला कृषि अधिकारी डॉ. गुरप्रीत सिंह के मुताबिक किसानों को फसल विविधीकरण के लिए प्रेरित करने के मकसद से ज़िले के सरकारी फार्म में 3 एकड़ में मूंगफली की खेती का प्रयोग किया गया है। इसके अंतर्गत मूंगफली की उन्नत किस्म 'गिरनार-4' की बुवाई की गई है। इस किस्म को मोगा की जलवायु के लिए अनुकूल माना जा रहा है। जुलाई के अंतिम हफ्ते में बुवाई की गई थी। यह अक्तूबर तक यानी 112 दिन में पक कर तैयार हो जाएगी। अगर यह प्रयोग सफल रहता है, तो इसे ज़िले के किसानों के लिए एक नए विकल्प के रूप में पेश किया जाएगा। गिरनार-4 एक उच्च तैलीय, सूखा-सहिष्णु किस्म है, जो प्रति हैक्टेयर 500 किलोग्राम अधिक पैदावार देती है। यह किस्म तना सड़न और ब्लैक फंगस के प्रति प्रतिरोधी है। वर्तमान में मोगा में मूंगफली की खेती नहीं होती है। ऐसे में यह प्रयोग सफल होना एक बड़ी उपलब्धि होगी। डॉ. गुरप्रीत सिंह ने बताया कि प्रयोग के नतीजे आने के बाद कृषि विभाग किसानों को इस किस्म की खेती के बारे में पूरी जानकारी देगा और उन्हें इसे अपनाने के लिए प्रोत्साहित करेगा। यह पहल मोगा की कृषि अर्थव्यवस्था में एक नई क्रांति ला सकती है।

कम लागत में ज्यादा मुनाफा

डॉ. गुरप्रीत सिंह के अनुसार, 'गिरनार-4' की खेती किसानों के लिए एक फायदेमंद सौदा साबित हो सकती है। इसमें एक एकड़ में खेती का खर्च 21,500 से 28,500 रुपए तक आ सकता है। यह किस्म प्रति एकड़ 10 से 12 क्विंटल (1200 किलोग्राम) तक पैदावार दे सकती है, जो धान और गेहूं से कहीं ज्यादा है। यह फसल कम पानी से भी अच्छी पैदावार देती है, जिससे भूजल को बचाने में भी मदद मिलेगी।

गुजरात बड़ा उत्पादक सूबा

मूंगफली की खेती गुजरात, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक, महाराष्ट्र और राजस्थान में बड़े पैमाने पर की जाती है। इनमें से गुजरात (अनुमानित पैदावार 36.74 लाख टन) देश का सबसे बड़ा मूंगफली उत्पादक राज्य है। देश में मुख्य रूप से बोल्ड, स्पैनिश और रेड नटाल के अलावा विभिन्न क्षेत्रों में कई उन्नत किस्में भी प्रचलित हैं। इनमें जीजी-2, गिरनार-4 किसानों के बीच लोकप्रिय हैं।

किसान मेले

10 सितम्बर — नाग कलां जहांगीर (अमृतसर)
12 सितम्बर — बल्लोवाल सौंखड़ी (शहीद भगत सिंह नगर)
16 सितम्बर — रौणी (पटियाला)
18 सितम्बर — फरीदकोट
24 सितम्बर — गुरदासपुर
30 सितम्बर — बठिण्डा

पी.ए.यू. कैंपस, लुधियाना में 26 व 27 सितम्बर, 2025 खेती दुनिया/कृषि संसार के स्टाल नं. 21 पर पधारें। मैंबरशिप हेतु सम्पर्क करें।

चौ.च.सिं. हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार
17 से 18 सितम्बर, 2025

फूड वेस्ट और 6 करोड़ कुत्ते – क्या भारत सीख लेगा विदेशों से?

डॉ. रचना गुप्ता

भारत जनसंख्या वृद्धि और बेरोज़गारी की समस्या से भी जूझ रहा है, वहीं आवारा कुत्तों और जानवरों की बेकाबू होती समस्या ने देश को वैश्विक स्तर पर शर्मसार कर दिया है। शायद सुप्रीम कोर्ट का पहला आदेश इसी शर्मिंदगी से देश को निकालने का प्रयास था, जहां नीति बनाने वाले और उन्हें लागू करने वाले दोनों स्तरों पर मौजूद गैर-जिम्मेदाराना रवैये को बेनकाब किया जा सके। सुप्रीम कोर्ट के दूसरे आदेश में भी बदलाव दिखे हैं, वह भी यही संकेत देते है कि भारत को अभी एक सिविक सोसाइटी बनने में कई वर्ष लगेंगे।

आवारा कुत्तों पर सुप्रीम कोर्ट के आदेश के तुरन्त बाद यह चिंतन-मनन करना होगा कि कैसे प्रदेश सरकारें और भारत सरकार मिल कर कानूनी संशोधनों के जरिए छोटी-छोटी समस्याओं को भ्रष्टाचार के जाल से मुक्त करें, ताकि वे भविष्य में भयंकर सामाजिक महामारियों का रूप न ले सकें। देश के पर्यटन स्थानों, शिमला और अन्य हिस्सों का हालिया उदाहरण लें, जहां ब्रिटिश पर्यटक घूमने आते हैं। वे सड़क पर बैठे बंदरों और कुत्तों के साथ सैल्फी लेना नहीं भूलते।

यहां तक कि वे उन तस्वीरों को भी कैद करते हैं, जहां माल रोड पर कुत्तों और बंदरों की गंदगी के बीच ढाबों का सड़ा हुआ खाना बिखरा रहता है और वही जानवर उसे खा रहे होते हैं। विदेशी पर्यटकों के लिए यह दृश्य दुर्लभ हो सकता है, लेकिन भारत के लिए यह गंभीर सामाजिक और स्वास्थ्य संकट का संकेत है।

सवाल उठता है कि आखिर भारत में अनुमानित 6 करोड़ कुत्तों

की जनसंख्या ऐसे कैसे बढ़ी। 11 अगस्त और 22 अगस्त, 2025 को सुप्रीम कोर्ट के आदेशों के परिवर्तित आदेशों में बताया गया कि भारत में आवारा कुत्तों की संख्या 5.25 करोड़ से ज्यादा है।

केवल दिल्ली में ही लगभग 10 लाख आवारा कुत्ते मौजूद हैं। सुप्रीम कोर्ट ने इस समस्या के समाधान के लिए 3 मुख्य बिंदुओं पर ज़ोर दिया है – पहला 'कैच-न्यूटर-वैक्सीन-एंड-रिलीज' (सी.एन.वी.आर.) की प्रभावी व्यवस्था; दूसरा, 'एनिमल बर्थ कंट्रोल' (ए.बी.सी.) प्रोग्राम को विश्व पशु स्वास्थ्य संगठन (ओ.आई.ई.) के मानकों के अनुरूप लागू करना और तीसरा, डॉग फीडिंग के लिए अलग क्षेत्र निर्धारित करना, साथ ही रेबीज़ से संक्रमित कुत्तों को सार्वजनिक स्थानों से हटाना।

लेकिन आवारा कुत्तों की संख्या बढ़ने से सबसे बड़े कारणों में से एक 'वेस्ट फूड' पर अब तक सरकारों का ध्यान गंभीरता से नहीं गया है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (2021 एवं 2024) ने साफ कहा है कि वैश्विक स्तर पर 931 मिलियन टन भोजन हर साल बर्बाद होता है और इसमें सबसे बड़ा हिस्सा घरों से आता है।

भारत में घरेलू भोजन-कचरे का अनुमान लगभग 50 किलोग्राम प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष (कुल 68.76 मिलियन टन प्रति वर्ष) है। परन्तु भारत में इस दिशा में कंट्रोल करने का काम नहीं हुआ। जब शहरों में खाद्य कचरा खुले में फैला रहता है, तब होटल – ढाबा – मंडी के पीछे, गीले-कचरे के ढेरों पर, तो यह कुत्तों के लिए स्थायी फूड-हब बन जाता है। लगातार भोजन मिलने से कुत्तों की सर्वाइवर रेट और प्रजनन-सफलता दोनों बढ़ती हैं। (पिल्लों की मृत्यु दर घटती है) और कुछ सालों में स्थानीय आबादी तेज़ी से ऊपर जाती है। इसका अर्थ है कि केवल नसबंदी पर्याप्त नहीं, जब तक वेस्ट-फूड कम न किया जाए। यह निष्कर्ष अंतर्राष्ट्रीय डॉग-पॉपुलेशन-मैनेजमेंट की स्टडी से निकला है। दुर्भाग्यवश, खुले में खाने को फेंकने पर अब तक सरकारी स्तर पर कोई सख्त कार्यवाई नहीं की गई है।

अगर विदेशों में आवारा कुत्तों के नियंत्रण के लिए बनाए गए कानूनों पर गौर करें, तो भारत को भी उनसे सबक लेना चाहिए। यूरोप, अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों में सख्त 'पैट ओनरशिप लॉ' लागू हैं, जिनके तहत हर कुत्ते का पंजीकरण अनिवार्य होता है, उन्हें नियमित वैक्सीनेशन दिलाना पड़ता है और खुले में छोड़ने पर जुर्माना व सजा का प्रावधान है। वहीं फूड वेस्ट मैनेजमेंट के कड़े नियमों ने इन देशों में कुत्तों और अन्य जानवरों के लिए उपलब्ध खुले भोजन को लगभग खत्म कर दिया है।

नतीजा यह हुआ कि सड़कों पर आवारा कुत्तों की संख्या नियंत्रित रही और नागरिक जीवन सुरक्षित बना रहा। भारत को भी इन अंतर्राष्ट्रीय मॉडलों से प्रेरणा लेकर ऐसे कानूनों और नीतियों को लागू करना होगा, ताकि बढ़ती कुत्तों की आबादी पर नियंत्रण पाया जा सके। विकसित देशों जैसे सिंगापुर ओर जर्मनी ने कठोर पैट-लॉ और फूड वेस्ट मैनेजमेंट लागू करके आवारा कुत्तों की संख्या को नियंत्रित किया है।

अब बात करें भारत में डॉग बाइट मामलों की, तो यहां मानव जीवन दांव पर लगा है और मानवाधिकारों का गंभीर हनन है। नैशनल हैल्थ पोर्टल ऑफ इंडिया के अनुसार, हर साल भारत में लगभग 1.5 से 2 करोड़ लोग कुत्तों के काटने का शिकार होते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट बताती है कि दुनिया में रेबीज से होने वाली कुल मौतों में से लगभग 36 प्रतिशत मौतें अकेले भारत में होती हैं। यहां हर साल करीब 18 से 20 हज़ार लोग रेबीज़ के कारण अपनी जान गंवाते हैं। भारत में पिछले 5 वर्षों (2018-2023) में डॉग बाइट के एक करोड़ से अधिक केस दर्ज हुए।

इसका सीधा अर्थ है कि जब तक आवारा कुत्तों पर नियंत्रण और वैक्सीनेशन की सख्त व्यवस्था नहीं होगी, तब तक नागरिक जीवन सुरक्षित नहीं रह सकता। सुप्रीम कोर्ट ने भी अपने हालिया आदेशों में यह स्पष्ट किया है कि जानवर के अधिकार और मानव जीवन की सुरक्षा के बीच संतुलन बनाना जरूरी है। लेकिन आंकड़े साफ दर्शाते हैं कि वर्तमान परिस्थितियों में जानवरों की सुरक्षा के नाम पर मानव जीवन को भारी कीमत चुकानी पड़ रही है।

कुल मिलाकर सुप्रीम कोर्ट ने सरकार को स्पष्ट चेतावनी दी है कि अब समय आ गया है जब भारत अपनी अंतर्राष्ट्रीय छवि को सुधारने के लिए कठोर कदम उठाए। सरकार को चाहिए कि वह व्यापक कानून और ठोस नीतियों के जरिए इसे उसी तरह नियंत्रित करे जैसे किसी महामारी को नियंत्रित किया जाता है। साथ ही 'डॉग लवर्स' को भी यह समझना होगा कि घर का वेस्ट या बचा हुआ खाना हर जगह कुत्तों को खिलाने से उनकी जनसंख्या और आक्रामकता दोनों बढ़ती है। सुप्रीम कोर्ट ने साफ कहा है कि मानव जीवन की सुरक्षा सर्वोपरि है।

लेखक पूर्व सदस्य हिमाचल प्रदेश लोक सेवा आयोग हैं

बीज कानून पाठशाला

बीज की एम.आर.पी.

आर.बी. सिंह, एरिया मैनेजर (सेवानिवृत), नेशनल सीड्स कारपोरेशन लिमिटेड (भारत सरकार का संस्थान), सम्प्रति – 'कला निकेतन', ई–70, विथिका 11, जवाहर नगर, हिसार–125001 (मो. 94667–46625)

बीज कृषि का अनमोल रत्न है। इसकी गुणवत्ता के लिए बीज अधिनियम 1966, बीज नियम 1968, बीज नियंत्रण आदेश 1983, जिसकी रचना आवश्यक वस्तु अधिनियम 1955 से हुई है, लागू है। बीज की गुणवत्ता एवं बीज विक्रय का नियमन इन कानूनों के द्वारा किया जाता है। इन कानूनों की पालना करवाने के लिए बीज निरीक्षक और बीज लाइसैंसिंग प्राधिकारी को असीम शक्तियां दी हुई हैं। कृषक को बीज उचित दर पर पर्याप्त मात्रा में सुगमता से उसकी पहुंच तक पहुंच सके, इसके लिए वाट एवं नापतौल अधिनियम 1976 एवं नियम 1977 लागू है, जो अब विधिक माप विज्ञान (पैक की गई वस्तुएं) नियम 2011 कहलाते हैं और बीज के पात्र पर एम.आर.पी. या यू.एस.पी. या विधिक माप विज्ञान निरीक्षक (Legal Metrology Inspector) को आवश्यक कार्यवाही करने के लिए अपार शक्तियां दी हैं और यदाकदा बीज पैकेटों पर भी विधिक माप विज्ञान के प्रावधानों का उल्लंघन होने पर आवश्यक दण्डात्मक कार्यवाही करता है।

1. एम.आर.पी. : बीज के पात्रों पर भी एम.आर.पी. लिखी जाए। दिनांक 01.04.2022 से एम.आर.पी. (MRP) के साथ यूनिट सेल प्राईज (USP) भी लिखना आवश्यक कर दिया है। एक किलो से नीचे मूल्य प्रति ग्राम और किलो से ऊपर की पैकिंग पर यू.एस.पी. प्रति किलो अंकित की जाए। बिना एम.आर.पी. लिखे विधिक माप विज्ञान (पैक वस्तु) नियम 2011 का उल्लंघन है और उल्लंघन होने पर दण्ड 20,000/– रुपए है। इस अधिनियम में यह प्रावधान है कि दण्ड को कम्पाउन्ड (समझौता) कर दिया जाता है और यदि आरोपी एक मुश्त भुगतान कर देता है, तो वह आरोप से मुक्त हो जाता है और उस पर कोई अभियोजन / मुकद्दमा / वाद दायर नहीं होता है। वह 8-10 साल न्यायालयों की आवाजाही से बच जाता है। यदि एक साथ जुर्माने का भुगतान नहीं करता है, तो व्यापारी पर मुकद्दमा दायर किया जाता है।

2. एम.आर.पी. क्या हो? : किसी बीज का एम.आर.पी. क्या हो, यह बीज उत्पादक कम्पनी की

उत्पादन लागत + डीलर कमीशन + मुनाफा (Profit) की गणना कर निश्चित की जाती है। बीज उत्पादन तकनीकी – साधारण या संकर। संकर उत्पादन प्रणाली में GMS या Emasculation है। बीज की एम.आर.पी. या यू.एस.पी. कितनी हो यह बीज उत्पादक का एक मात्र अधिकार है। एम.आर.पी. के लिए बीज उत्पादक पर दबाव नहीं डाला जा सकता है। जब तक की फसल का अधिकतम मूल्य किसी अधिनियम/कानून द्वारा केन्द्र या राज्य सरकार द्वारा निर्धारित न किया गया हो। उदाहरण के लिए केन्द्र सरकार ने आवश्यक वस्तु अधिनियम 1955 के अनुसार बी.टी. कपास की विक्रय एम.आर.पी. प्रति वर्ष तय होती है। इसी प्रकार महाराष्ट्रा कॉटन सीड (Regulation of Supply, Distribution, Sale and Fixation of Sale Price Act 2009) जिसके द्वारा महाराष्ट्र सरकार कपास की एम.आर.पी. निश्चित करती है।

3. एम.आर.पी. और अभियोजन : एम.आर.पी. के उल्लंघन के लिए विधिक माप विज्ञान निरीक्षक वाद दायर कर सकता है, यदि दोषी व्यक्ति Compounding के दौरान जुर्माना नहीं जमा करता। कृषि अधिकारी – बीज निरीक्षक तथा लाइसैंस अनुज्ञापन प्राधिकारी (Licensing Authority) को बीज अधिनियम 1966, बीज नियम 1968 तथा बीज नियंत्रण आदेश 1983 तथा आवश्यक वस्तु अधिनियम 1955 के उल्लंघन करने पर वाद दायर करने का अधिकार है, न कि विधिक माप विज्ञान (पैक वस्तु) नियम 2011 के उल्लंघन करने पर। Maharashtra Cotton Seed (Regulation of Supply, Distribution, Sale and Fixation of Sale Price Act 2009) या ऐसे ही अन्य राज्यों द्वारा बनाए अधिनियमों के तहत कपास (बी.टी./गैर बी.टी.) की विक्रय दर घोषित की गई हो, जैसे बी.टी. कपास के लिए भारत सरकार हर वर्ष बी.टी. जीन I और बी.टी. जीन II में करती है। उसके विरूद्ध तो एम.आर.पी. में कार्यवाही कर सकते हैं तथा अन्य फसलों में जिनकी दर भारत सरकार या राज्य सरकार द्वारा तय नहीं की गई, के बारे बीज निरीक्षक द्वारा वाद दायर करना त्रुटि पूर्ण है :-

हर रिश्ते में कुछ ना कुछ स्वार्थ तो होता है,
किसान अच्छे उत्पादन हेतु प्रमाणित बीज बोता है।

धान की फसल में कीटों का प्रबंधन

प्रेम चन्द शर्मा एवं पवन कुमार शर्मा, चौधरी सरवन कुमार हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, कीट विज्ञान विभाग, पालमपुर-176062 (हिमाचल प्रदेश)

हिमाचल प्रदेश में आनाज की फसलों में धान का एक महत्वपूर्ण स्थान है। धान की फसल में विभिन्न कीट पौधशाला से लेकर फसल की कटाई तक हानि पहुंचाते हैं, जिससे पैदावार में कमी आ जाती है। धान की फसल में प्रमुख कीटों तथा प्रबंधन की जानकारी इस लेख में दी गई है।

1. तना छेदक कीट : इस कीट की सुंडियां तने को अंदर से खाती हैं, जिससे उनमें छोटे-छोटे छिद्र पड़ जाते है। प्रारंभिक अवस्था में इस कीट से ग्रसित पौधे बीच से सूख जाते है तथा पौधा मर जाता है। इन लक्षणों को डेड हर्टस (Dead

Hearts) कहा जाता है। बाद की अवस्था में सुंडियों के तने के अंदर खाने से सफेद बालियां (White Ears) बनती है, जिनमें दाने बिल्कुल खाली रह जाते हैं। इस प्रकार की बालियों को ऊपर से पकड़ कर खींचा जाए तो ये आसानी से बाहर आ जाती हैं। बढ़े हुए पौधों में कई बार सुंडियां पक रहे दानों को खाती हैं। इस कीट के प्रबंधन के लिए दानेदार कीटनाशक कार्बोफ्यूरॉन 3जी को 33 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर के हिसाब से रोपाई के 10 दिन बाद डालना चाहिए तथा 3-4 दिनों तक 3-4 सैंटीमीटर पानी खेत में खड़ा रहना चाहिए या 500 मिलीलीटर मिथाइल पैराथियान 50 ई.सी. 500 लीटर पानी में घोल कर प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिड़काव किया जा सकता है। कटाई के समय पौधों को ज़मीन के साथ काटें तथा अवशेषों को एकत्रित कर नष्ट कर दें।

2. धान का हिस्पा : हिमाचल प्रदेश के ज़िला कांगड़ा में इस कीट का प्रकोप पिछले दो वर्षों में अधिक पाया गया। हिस्पा कीट का प्रौढ़ गहरे काले रंग का होता है, जिसके शरीर पर कांटें होते हैं। इस कीट के शिशु तथा प्रौढ़ दोनों ही धान की फसल को हानि पहुंचाते हैं। शिशु पत्तों के अंदर सुरंग बना कर पत्तों को खाते रहते हैं, जिससे पत्तों पर भूरे रंग के चकत्ते बन जाते हैं। प्रौढ़ कीट पत्तों के हरे भाग को खाते रहते है, जिसके कारण पत्तों पर सफेद धारियां बन जाती हैं।

यह कीट मेढ़ों पर उग रही घास पर चलता रहता है, अतः मेढ़ों से घास निकाल देना चाहिए। कीटनाशक का छिड़काव तभी करें, जब 10 प्रतिशत पत्ते कीट ग्रसित हों। रोपाई के 10 दिन बाद या 40 दिन की सीधी बुवाई की फसल में 1250 मिलीलीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. या 500 मिलीलीटर मिथाइल पैराथियान 50 ई.सी. 500 लीटर पानी में घोल कर प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिड़काव करें।

3. चैफर भृंग : इस कीट का प्रौढ़ (भृंग) चमकीला होता है। धान के सिट्टों के निकलते ही यह कीट दानों को खोल कर दुधिया भाग को खा जाता है। प्रभावित दाने कुछ दिनों के बाद सूखने के कारण सफेद हो जाते है तथा सिट्टों में खुले हुए दाने नज़र आते है, जो अन्य कीटों से ग्रसित सफेद दानों से भिन्न होते है।

4. केस वर्म : इस कीट की सुंडियां पत्तों को अपने शरीर के बराबर काट कर तथा उनको गोलाकार रूप में एक-दूसरे से जोड़ कर उनके अंदर रहते हुए पत्तों को खाती रहती है। कीट ग्रसित फसल ऐसी प्रतीत होती है जैसे पत्तों को कैंची से बराबर काट दिया गया हो।

इस कीट के प्रबंधन के लिए खेतों से पानी निकाल दें। कीट के प्रकट होते ही 125 मिलीलीटर स्पाइनोसैड 45 ई.सी. या 1250 मिलीलीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. को 500 लीटर पानी में घोल कर प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिड़काव करें। यदि आवश्यकता हो तो 20 दिनों बाद फिर छिड़काव करें।

5. पत्ता लपेटक कीट : इस कीट की सुंडियां पौधों के पत्तों

को किनारे से लपेट कर उनके अंदर रह कर पत्तों को खाती रहती है। इस कीट के नियंत्रण के लिए कीट ग्रसित पत्तों को काट कर नष्ट कर दें। घासीय किस्म के खरपतवारों को निकाल कर नष्ट कर दें। फसल पर कीट का प्रकोप यदि 10 प्रतिशत के आस-पास हो तो 750 मिलीलीटर मोनोक्रोटोफॉस 36 ई.सी. या 1250 मिलीलीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. को 500 लीटर पानी में घोल कर प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिड़काव करें।

6. काला भृंग : यह कीट पौधे के ज़मीन के अंदर के भाग को खाता है तथा पौधे मुरझा कर मर जाते हैं। इस भृंग का प्रकोप नर्सरी तथा असिंचित धान की फसल में अधिक पाया जाता है। इसके प्रबंधन के लिए बुवाई के समय 2 लीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. को 25 किलोग्राम रेत में मिला कर प्रति हैक्टेयर डालें। कीटनाशक रसायन का प्रयोग तभी करें, जब 5 प्रतिशत पौधे कीट ग्रसित हों।

7. टिड्डे : इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ दोनों ही पत्तों को खाते हैं तथा विशेष परिस्थितियों में भारी नुकसान पहुंचाते हैं। कीट का आक्रमण दिखाई देने पर 1250 मिलीलीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. को 500 लीटर पानी में घोल कर प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिड़काव करें।

8. वीविल (Root Weevil) : इस कीट का प्रकोप कुछ क्षेत्रों में देखा गया है। यह कीट जुलाई से सितंबर महीने तक सक्रिय रहता है। इस कीट के शिशु जोकि सफेद तथा टांग रहित होते है, मिट्टी में रह कर जड़ों को खाते रहते हैं। कीट ग्रसित पौधे पीले पड़ जाते हैं तथा छोटे रह जाते हैं। कीट का आक्रमण दिखाई देने पर 10 किलोग्राम फोरेट 10जी प्रति हैक्टेयर के हिसाब

से धान के खेतों में खड़े पानी में डालें।

9. हॉपर समूह : इस कीट के शिशु तथा प्रौढ़ अगस्त-सितम्बर में पौधों से रस चूसते हैं। कीट प्रकोप होने पर 1250 मिलीलीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. को 500 लीटर पानी में घोल कर प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिड़काव करें।

10. दीमक : दीमक बहुभक्षी कीट है, जोकि फसलों का बहुत बड़ा शत्रु है। यह सर्वव्यापी कीट है और भूमि में रहता है। यह धान के पौधों की जड़ों को खा जाती है, जिससे पौधे सूख जाते हैं। दीमक कीट के प्रकोप वाले क्षेत्रों में 1500 मिलीलीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. 25 किलोग्राम सूखी रेत में मिला कर प्रति हैक्टेयर डालें।

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9–ए, अजीत नगर,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 98151–04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 90410–14575

वर्ष : 01 अंक : 02
तिथि : 01-09-2025

सम्पादक
परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड

डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : **PARMINDER KAUR**
Printer, Publisher and Owner of Weekly
'KHETI SANDESH' Printed at **Drishti Printers,**
Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market,
Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and
published from **Kheti Sandesh**, House No. 9-A, Ajit Nagar,
Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com
Mob. 90410-14575, RNI No.**PBBIL/25/A0210**

फल एवं सब्ज़ियों का फसलोत्तर प्रबंधन ज़रुरी

फलों से हमें खनिज, विटामिन्स, प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट आदि की प्राप्ति होती है, जो अच्छे स्वास्थ्य एवं शारीरिक विकास हेतु आवश्यक है। टमाटर, गाजर, खुबानी आदि फलों के रंगीन तन्तुओं में एंटीऑक्सीडेंट एवं कैरोटिनायड्स होते है, जो शरीर को हानि पहुंचाने वाले फ्री रेडिकल्स को खत्म करते हैं। टमाटर व तरबूज़ में उपलब्ध लाईकोपीन प्रोस्टेट कैंसर के खतरों को कम करता है। प्याज़, फूलगोभी, ब्रोकोली, सेब, अंगूर तथा हरे पत्ते वाली सब्ज़ियों में फ्लेविनायड्स होते हैं, जो समय से पूर्व संभावनाओं को कम करते हैं। सेजना की पत्तियां/फूल/फलियां व अनारदाना रक्त की मात्रा बढ़ा कर रक्तचाप को दूर करने में सहायक हैं। दैनिक आहार में फलों व सब्ज़ियों के नियमित सेवन से हम भोजन की पौष्टिकता बढ़ा सकते हैं। यह पाया गया कि 20–25 प्रतिशत फल/सब्ज़ी खेत से उपभोक्ता के पास पहुंचने के दौरान सड़–गल कर नष्ट हो जाते हैं। फल व सब्ज़ियों की तुड़ाई, श्रेणीकरण, मूल्य वर्धन, पैकेजिंग, भंडारण व विपणन संबंधी आधुनिक विकसित पद्धतियां को अपना कर इनकी उपलब्धता एवं उपयोग को बढ़ाया जा सकता है।

फलों की तुड़ाई : खाने योग्य प्रयोग की जाने वाली फल व सब्ज़ियों की गुणवत्ता तुड़ाई के समय उनकी परिपक्वता की अवस्था पर निर्भर करती है। यदि सब्ज़ियों को प्रयोग में लाने हेतु उचित अवस्था पर नहीं तोड़ा जाता है, तो उचित रंग, स्वाद, महक, आकार आदि नहीं आ पाता। फलों की तुड़ाई करते समय फलों को खींच कर ना तोड़ें, इससे पौधों की शाखाओं को नुकसान होता है। तुड़ाई उपरांत फलों को छायादार स्थान पर रखें, जिससे उनकी आंतरिक गर्मी कम हो जाए। फलों को सावधानीपूर्वक टोकरी आदि में भर कर वातानुकूलित वैन में खेत से पैकिंग शेड तक ले जाया जाना चाहिए तथा पैकेजिंग शेड में इनकी छंटाई श्रेणीकरण करें। तुड़ाई के बाद फलों की भौतिक तथा रासायनिक क्रियाएं होती रहती हैं। परिणामत: इनके भार, रूप–रंग, सुवास, स्वाद, गठन व पोषण पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इन गुणों में कमी आने के कारण फल खराब हो जाते हैं। फलों के खराब होने के कई कारण हो सकते हैं, जैसे परिपक्वता, खरोच, रासायनिक क्षति, व्याधि, तापक्रम, आर्द्रता, उपऑक्सी–करण, वानस्पतिकरण, वाष्पशील पदार्थ, पैकेजिंग व्याधि आदि।

आम : फल को काट कर देखने पर गुद्दे का रंग हल्का पीला हो तथा गुठली पूर्ण रूप से सख्त हो तथा पानी में डुबोकर देखने पर फल सतह पर तैरते हैं। पूर्ण रूप से डूबे नहीं, तो फल पके तथा तुड़ाई हेतु उपयुक्त हैं। तोड़े हुए आम कम से कम 1 सैंटीमीटर डंठल के साथ होने चाहिए। आम के फल किस्म, आकार, बाहरी रंग एवं गुणवत्ता आदि के आधार पर श्रेणीकृत किए जाते हैं। फल पूर्ण विकसित, कड़े, ताज़ा, स्वस्थ एवं अन्य समस्याओं जैसे काले धब्बे, चोट–खरोच, रगड़, सिकुड़न आदि से मुक्त होने चाहिए।

केला : फल 115 से 130 दिन में तैयार हो जाते हैं। इस अवस्था में फल का तीन–चौड़ाई भाग का परिपक्व होना, कोणापन का लुप्त होना, गुदे और छिलके का अनुपात 1.1 से 1.4 होना प्रमुख लक्षण हैं।

लीची : लीची क्लाइमेक्ट्रिक तरह का फल है, अत: इसे पकने के ठीक दो–तीन पहले ही तुड़ाई करनी चाहिए, जिससे पूर्ण रूप से पके फल का विपणन आसानी से हो सके। जब पके फल के छिलकों का रंग गुलाबी तथा कांटों का आकार चपटा सा होता है। उस समय इसकी तुड़ाई पैनिकल सहित कर लेनी चाहिए।

अमरूद : अमरूद में तोड़ने के पश्चात् पकने की क्रिया नहीं होती है। अत: फल वृक्ष पर ही पकने लगे, तब तोड़ना चाहिए। फलों में पीलापन आना तथा सुगंध आना पकने का लक्षण है।

नींबू वर्गीय फल : फलों का हरापन विलुप्त होकर फसल व किस्म के अनुसार केरोटिन का विकास, तुड़ाई के समय चीनी व अम्ल का अनुपात अनुभाग 10 से 12 प्रतिशत होना चाहिए।

बेर : फलों का रंग परिवर्तन की अवस्था पर तुड़ाई करते हैं, विशेष गुरूत्व 1 से कम हो तथा घुलनशील ठोस पदार्थ 17–18 प्रतिशत के आस–पास होने पर परिपक्वता का अनुमान लगाया जाता है।

फालसा : फलों का रंग गहरा हो जाए, घुलनशील ठोस पदार्थ की मात्रा 19 प्रतिशत तथा अम्ल की मात्रा 34 प्रतिशत होती है।

अनार : अनार के पकने पर उसके दाने में किस्म अनुसार रंग आता है। फलों में 12 से 16 प्रतिशत चीनी तथा 1.5 से 2.5 प्रतिशत तक अम्ल होता है। साधारणतया फलों को थपथपाने पर धातृ सदृश्य आवाज़ आए तो समझना चाहिए कि फल परिपक्व है।

आंवला : फल का रंग गहरे हरे रंग का हरा विशेष गुरूत्व किस्मानुसार जैसे बनारसी में 1.02 तथा चकैया में 1.10 होता है। घुलनशील ठोस पदार्थ तथा अम्ल के अनुपात में भी तुड़ाई की अवस्था का सही ज्ञान किया जा सकता है। अनुपात 1:1 होता है।

पपीता : पपीते के फल जैसे ही हल्के पीले पड़ें, उन्हें तोड़ कर ठण्डे कमरे में भूसे या सूखी घास पर एक तह से भण्डारण कर लेते हैं। प्रत्येक फल को कागज़ में लपेट कर रखने से भी फल अति शीघ्र पक कर तैयार हो जाते हैं।

सब्ज़ियां :

टमाटर : टमाटर को दूर के बाज़ार में भेजने के लिए पकी हुई हरी अवस्था (जब टमाटर पूरी तरह पक कर तने की तरफ के हिस्से पर भूरा रंग बनना शुरू हो जाए व फल का तने से दूर वाला हिस्सा पीला हरा होना शुरू हो जाए) पर तुड़ाई करनी चाहिए। टमाटर को प्रसंस्करण या अन्य उत्पाद बनाने हेतु फलों को पूरी तरह पकने के बाद ही तोड़ना चाहिए।

कद्दू वर्गीय सब्ज़ियां : सामान्यतया टिण्डा, करेला, खीरा व ककड़ी के फल पौधों पर फल आने के 6–8 दिन के अंदर तुड़ाई योग्य हो जाते हैं, जबकि तोरई एवं घीया में फूल आने के 30–40 दिन बाद फल तोड़ाई हेतु तैयार होते हैं। खरबूजे के फलों को पौधे पर पूरी तरह पकने से कुछ समय पहले (जब फल हरे हों व उनके ऊपर धारियां पीली पड़ने लगे) तोड़ लेते है, जिससे उपभोक्ता तक पहुंचते–पहुंचते फल पूरी तरह पक जाता है। तरबूज़ में जब फल का ज़मीन का छूने वाला हिस्सा सफेद से पीला पड़ना शुरू हो जाए, तो फल तोड़ने की अवस्था में होता है। अधिकतर कद्दू वर्गीय फल कोल्ड स्टोर में अधिक समय तक नहीं रखे जाते, फिर भी इनको कम ताप व उचित आर्द्रता पर कोल्ड स्टोर में रख सकते है।

गाजर व मूली : गाजर व मूली खुदाई से पहले एक हल्की सिंचाई कर दें, जिससे इनकी खुदाई आसान व बिना किसी नुकसान के हो सके। गाजर की खुदाई इसके ऊपरी सिरे का व्यास/चौड़ाई 2–4 सैंटीमीटर होने पर कर लेनी चाहिए। मूली में अधिकतर किस्में बुवाई के 25–55 दिन के अंदर खुदाई के लिए तैयार हो जाती हैं। गाजर व मूली की जड़ों को खुदाई के बाद पानी से अच्छी तरह धोएं तथा लंबाई, मोटाई व आकार के अनुसार श्रेणीकृत करें।

पालक : पालक बुवाई के 4 सप्ताह बाद कटाई लायक हो जाता है। इसकी 4–6 कटाई ली जा सकती है।

बैंगन : फलों को पूरी तरह पकने से पहले अच्छा आकार व रंग आते ही तुड़ाई करें। तुड़ाई के समय फलों के साथ डंठल व हरा कैलिक्स रहने दें।

प्याज़ व लहसुन : प्याज़ व लहसुन के कंद पौध रोपाई के 130–135 दिन बाद पक कर तैयार हो जाते हैं। जब 50 प्रतिशत कंदों की ऊपरी पत्तियां ज़मीन पर गिर जाएं, तब इनकी खुदाई शुरू कर देनी चाहिए।

श्रेणीकरण : सब्ज़ियों के विपणन के लिए ग्रेडिंग बहुत महत्वपूर्ण पहलू है। इसके लिए फलों को उनके रंग, आकार व पकाव के आधार पर अलग–अलग श्रेणियों में छांटते हैं ताकि अच्छा बाज़ार भाव मिल सके।

भंडारण : फल एवं सब्ज़ियों की उपयोग अवधि बढ़ाने, बाज़ार में अनावश्यक बहुलता को रोकने व नियमित आपूर्ति बनाए रखने, दूर के स्थानों पर भेजने व उचित मूल्य प्राप्त करने हेतु भंडारण एक आवश्यक प्रक्रिया है। फलों का आंतरिक तापक्रम कम करने के लिए पूर्व शीतलन प्रभावी पाया गया है। पूर्व शीतलन द्वारा फलों के अंदर होने वाली रासायनिक क्रियाएं जो फलों को पकाने में सक्रिय होती हैं और मंद पड़ जाती है, जिससे फलों की भंडारण क्षमता बढ़ जाती है तथा भंडारण अवधि में फल कम खराब होते हैं।

प्रसंस्करण : फल सब्ज़ी परिरक्षण/प्रसंस्करण किसानों के लिए अतिरिक्त रोज़गार का एक साधन है। बाज़ार में जब फल–सब्ज़ियों की अधिक आवक होती है, उस समय इनका मूल्य कम होता है, तब इनको परिरक्षण द्वारा संरक्षित कर वर्ष के बाकी महीनों में उपयोग किया जा सकता है। फल एवं सब्ज़ियों से विभिन्न उत्पाद बनाए जा सकते हैं, जैसे जैम, जेली, मुरब्बा, कैण्डी, पनीर, टॉफी, शरबत, रस, आचार, चटनी, केचअप, सॉस आदि। उत्पाद की गुणवत्ता बनाए रखने हेतु यह आवश्यक है कि फलों को उत्पाद की आवश्यकता अनुसार उचित परिपक्वता पर तोड़ें तथा परिरक्षण की उचित विधि का प्रयोग करें।

तालिका : फलों व सब्ज़ियों के भंडारण हेतु उपयुक्त तापमान

फल/सब्ज़ी का नाम	भंडारण का तापमान (सैंटीग्रेड)	भंडारण का समय (दिन)
आम	11–13	40–50
संतरा	11–13	40–50
अमरूद	8–10	10–13
नींबू	11–13	40–50
टमाटर	15–20	15–20
भिंडी	08–10	14
बैंगन	08–10	20–25
शिमला मिर्च	11–13	21

पपीते में समेकित रोग एवं कीट प्रबन्धन

पपीता एक प्रमुख उष्ण एवं उपोष्ण कटिबंधीय फल है। पपीते की खेती गर्म एवं नम जलवायु में सफलतापूर्वक की जा सकती है। पपीता की अच्छी वृद्धि के लिए 22-26 डिग्री सैल्सियस तापमान उपयुक्त पाया गया है। पपीता पकने के समय शुष्क एवं गर्म मौसम होने से फलों की मिठास बढ़ जाती है। पपीता का उपयोग कच्चे एवं पके फल के रूप में किया जाता है। पपीते की खेती की लोकप्रियता दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही है।

क्षेत्रफल की दृष्टि से पपीता हमारे देश का पांचवां लोकप्रिय फल है। इसके फलों में विटामिन ए, सी एवं अन्य खनिज लवण भी प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। कच्चे फल का उपयोग पेठा, बर्फी, खीर, रायता, सब्ज़ी आदि बनाने के लिए किया जाता है, जबकि पके फलों से जैम, नेक्टर एवं कैंडी इत्यादि बनाए जाते हैं। यह सरलता एवं शीघ्रता से पैदा होने होने के कारण गृहवाटिका एवं व्यवसायिक फसल के रूप में लोकप्रिय होता जा रहा है।

क्षेत्रफल की दृष्टि से पपीता हमारे देश का पांचवां लोकप्रिय फल है। इसके फलों में विटामिन ए, सी एवं अन्य खनिज लवण भी प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। कच्चे फल का उपयोग पेठा, बर्फी, खीर, रायता, सब्ज़ी आदि बनाने के लिए किया जाता है, जबकि पके फलों से जैम, नेक्टर एवं कैंडी इत्यादि बनाए जाते हैं। यह सरलता एवं शीघ्रता से पैदा होने होने के कारण गृहवाटिका एवं व्यवसायिक फसल के रूप में लोकप्रिय होता जा रहा है।

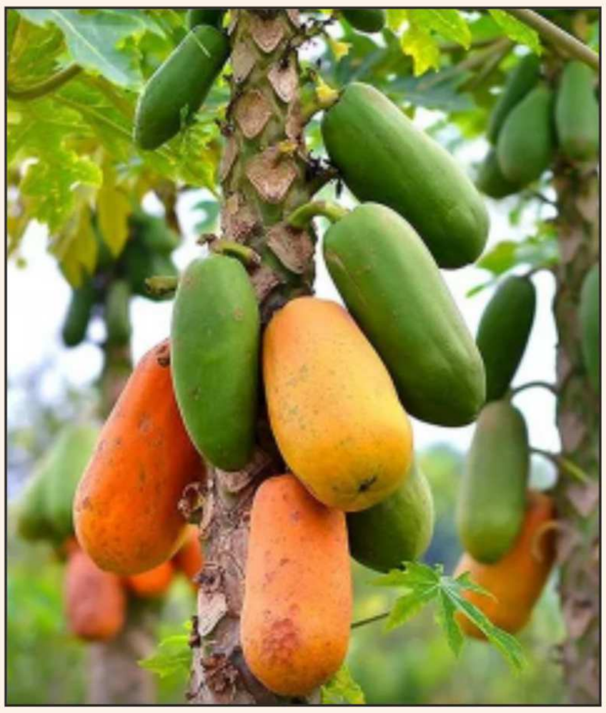

प्रजातियां : पूसा ड्वार्फ, पूसा नन्हा, पूसा जायन्ट, पूसा डेलिसियस, पूसा मजेस्टी, पुणे सेलेक्शन-1, ताईवान एवं पुणे सेलेक्शन-3 आदि।

भूमि चयन एवं पौधशाला प्रबन्धन : पपीता की खेती के लिए अच्छे जल निकास वाली ऊँची एवं उपजाऊ भूमि होनी चाहिए। साथ ही पौधशाला में ऊँची बनाई हुई क्यारियों पर बीजों की बुवाई करें तथा वर्षा या तेज़ धूप से बचाने के लिए खर या पुआल से ढक दिया जाए।

सर्वप्रथम बीज को कार्बेन्डाज़िम + थीरम (1:1) या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम से उपचारित करें। प्रति 1000 वर्ग मीटर क्षेत्रफल में पपीते की फसल के लिए 3 मीटर लम्बी व 1 मीटर चौड़ी क्यारी की पौधशाला बना लें एवं क्यारी 15 सैंटीमीटर ऊँची उठी हुई होनी चाहिए। बीज को क्यारी में कतार में लगाना चाहिए एवं कतार से कतार की दूरी 10 सैंटीमीटर होनी चाहिए व 1 सैंटीमीटर गहरा बोना चाहिए। इस प्रकार प्रति 200 वर्ग मीटर क्षेत्रफल के लिए 5.0 ग्राम बीज का प्रयोग करें। पौधशाला में पौध गलन रोग दिखाई पड़ने पर मैंकोज़ेब या मेटालेक्सिल (8 प्रतिशत) + मैंकोज़ेब (64 प्रतिशत) नामक फफूंदीनाशक 2.0 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से तुरन्त छिड़काव करें।

पौधों को तैयार करने हेतु पौधशाला विधि की अपेक्षा पोलीथीन की थैलियों में उगाने की विधि भी सरल है। इसके लिए 150-200 गेज की 25 सैंटीमीटर लम्बी तथा 20 सैंटीमीटर चौड़ी थैलियों का प्रयोग करें। थैलों में बालू, कम्पोस्ट तथा भुरभुरी मिट्टी (1:1:1) भरकर 3-4 बीजों को एक सैंटीमीटर की गहराई में बुवाई करें तथा मिट्टी में पर्याप्त नमी बनाए रखें। पौध डालने का कार्य मुख्यत: अगस्त के महीने में करें। लगभग 10-15 दिन में पपीते के बीज जमकर बाहर दिखाई देने लगते हैं जब पौधे 35-40 दिन के (15-20 सैंटीमीटर ऊंचे) हो जाएं। तब थैलियों को नीचे से ब्लेड द्वारा सावधानीपूर्वक काटकर पहले से तैयार किए गड्ढे में लगाएं।

रोपाई : गर्मी के दिनों में खेत को 2-3 बार अच्छी तरह जोतकर समतल बनाएं तथा रोपाई हेतु 60×60×60 सैंटीमीटर आकार के गड्ढे तैयार करके 15-20 दिनों के लिए खुला छोड़ दिया जाए तथा वर्षा शुरू होने से पहले गड्ढे में भुरभुरी मिट्टी, 15 किलोग्राम कम्पोस्ट, 500 ग्राम नीम की खली मिश्रित उर्वरक (डी.ए.पी., एम.ओ.पी., यूरिया 2:3:1 के अनुपात में) 500 ग्राम प्रति गड्ढे उपयोग करें तथा कार्बोफ्यूरॉन 5.0 ग्राम प्रति गड्ढे की दर से रोपाई के 10 दिन पूर्व गड्ढे में भर दिया जाए। पौधशाला में पौधे की लम्बाई 15-20 सैंटीमीटर हो अथवा 35-40 दिन के पौधे की ही रोपाई करें। पौधे से पौधे की दूरी 1.8×1.8 मीटर रखें एवं नर व मादा पौधों का उचित अनुपात (1:10) बनाए रखने के लिए एक गड्ढे में तीन पौधों की रोपाई करें।

खाद एवं उर्वरक : संस्तुति के अनुसार पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए डी.ए.पी. 750 ग्राम, यूरिया 100 ग्राम, पोटाश 150 ग्राम, सल्फर 50 ग्राम, बोरॉन 5 ग्राम तथा वर्मीकम्पोस्ट 2.5 किलोग्राम प्रति पौधे की दर से प्रयोग करें।

सिंचाई : पपीते के सफल उत्पादन हेतु बगीचे में आवश्यक जल प्रबंधन होनी चाहिए। जब तक पौधा फलन में नहीं आता, तब तक हल्की सिंचाई करनी चाहिए। गर्मी के दिनों में एक सप्ताह तथा जाड़े के दिनों में 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

फलन : पपीता में छ: माह पर वास्तविक रूप से अधिक फल लगते हैं, जिनसे अधिक लाभ प्राप्त होता है। फल का वज़न 500 ग्राम से 1.5 किलोग्राम तक होता है एवं प्रति पौधा 45-50 किलोग्राम फलन होता है।

पादप सुरक्षा

पपीते की फसल के रोग :

आर्द्रगलन रोग : यह बीमारी पौधशाला में पीथियम एफैनिडरमेटन नामक कवक के कारण होती है। इसका प्रभाव नये अंकुरित पौधे पर होता है तथा पौधे का तना ज़मीन के पास से सड़ जाता है और पौधा मुरझाकर गिर जाता है। अत: इसके बचाव के लिए नर्सरी की मिट्टी को बोने से पहले फारमेल्डिहाइड को 2.5 प्रतिशत घोल से उपचारित कर पॉलीथीन से 48 घंटों के लिए ढक देना चाहिए तथा बीज को थीरम या कैप्टान (2.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) नामक दवाओं से उपचारित कर बोना चाहिए। पौधशाला में इस रोग से बचाव हेतु मैटालेक्सिल (8 प्रतिशत) + मैंकोज़ेब (64 प्रतिशत) 2.0 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से पौधों की जड़ के पास अच्छी तरह से डालकर तर कर देना चाहिए, जिससे जड़ सड़न रोग से सम्पूर्ण सुरक्षा मिलती है।

फलों का सड़ना (एन्थ्रैक्नोज़) : यह पपीता के फल की प्रमुख बीमारी है। यह कोलिटोट्राईकम ग्लियोस्पोराडस नामक कवक के द्वारा होती है। इस रोग में फलों के ऊपर छोटा जलीय धब्बा बन जाता है, जो बाद में बढ़कर पीले या काले रंग का हो जाता है। यह रोग फल लगने से लेकर पकने तक लगता है, जिसके कारण फल पकने के पूर्व ही गिर जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए मैंकोज़ेब 2.0 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

चूर्णित फफूंद : यह रोग ओडियम यूडिकम एवं ओडियम कैरिकी नामक कवक से होता है। इससे प्रभावित पत्तियों पर सफेद चूर्ण जैसा जमाव हो जाता है, जो बाद में सूख जाती है। इस रोग की रोकथाम के लिए सल्फेक्स (3.0 ग्राम प्रति लीटर पानी में) का छिड़काव करना चाहिए।

पपीते के विषाणु जनित रोग

पर्ण कुंचन रोग : यह पपीते का एक गंभीर विषाणु रोग है। इस रोग के कारण शुरू में पौधों का विकास रुक जाता है और पत्तियां गुच्छा नुमा हो जाती हैं तथा पत्तियों का आकार छोटा हो जाता है। पत्तियों का ऊपरी सिरा अन्दर की ओर मुड़ जाता है। प्रभावित पौधे में फूल और फल नहीं लगते हैं।

पपीता का रिंग स्पॉट रोग : पर्ण कुंचन की तरह यह भी एक गंभीर विषाणु रोग है। इस रोग में पपीते की पत्तियां कटी-फटी हो जाती है तथा हर गाँठ पर कटे-फटे पत्ते निकलने लगते हैं। पत्तियाँ के तने एवं फलों पर छोटे गोलाकार धब्बे पड़ जाते हैं। प्रभावित फल छोटे आकार के एवं फलन बहुत कम हो जाता है।

उपरोक्त दोनों विषाणु रोग का पूरी तरह रोकथाम संभव नहीं है। विषाणु रोग वर्षा के दिनों में काफी तेज़ी से फैलता है। अत: वर्षा के समाप्त होने पर खेत में पपीता लगाने से विषाणु रोगों का प्रभाव कम होता है। यह विषाणु रोग कीटों जैसे सफेद मक्खी और माहू से फैलते हैं। अत: इनकी रोकथाम हेतु मैलाथियान (1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में) या डाइमेथोएट (2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में) का छिड़काव करना चाहिए। प्रयोगों द्वारा ऐसा देखा गया है कि नीम की खली या संस्तुत कम्पोस्ट खाद के उपयोग करने पर विषाणु रोग का प्रकोप कम होता है। इस रोग से प्रभावित पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिए। प्रभावित पौधों से रोपण हेतु बीज नहीं लेना चाहिए।

पपीते की फसल में कीट प्रबंधन : पपीते में कीट बहुत कम लगते हैं। इससे मुख्य रूप से माहू है, जो पत्तियों के निचले भाग में छेद कर रस चूसता है तथा विषाणु रोगों के फैलाने में वाहक के रूप में कार्य करता है। इसके नियंत्रण के लिए डाइमेथोएट 2.0 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

पपीते में फल विकृत : यह विकृति फलन की प्रारंभिक अवस्था में ही शुरू हो जाती है, लेकिन इनका विकराल स्वरूप पकने की अवस्था और पेड़ की वयस्क अवस्था में एकाएक बढ़ जाती है। यह प्राय: सर्दियों में जब तापमान न्यूनतम होता है, तब अधिक प्रकोप दिखाई देता है। विकृत फल विकार से

निजात पाने हेतु 5 ग्राम बोरेक्स प्रति पौधा पुष्पन एवं फलन के प्रारम्भ होने पर देना अधिक लाभदायक है। शुरुआती दिनों में बोरॉन नहीं दे पाने पर फल विकास के समय 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर पत्तियों पर छिड़काव करना चाहिए।

पपीते में अंत: फसली खेती : पौधों के बीच की दूरी को 30 सैंटीमीटर बढ़ाकर धनिया की फसल को ले सकते हैं। इसमें किसी भी अतिरिक्त खाद-उर्वरक की ज़रुरत भी नहीं पड़ती है और लागत भी कम आती है। इस तरह एक वर्ष में पपीते की फसल के साथ धनिया एवं तरबूज की अंत: फसल लेकर 40,000-45,000 रुपए की अतिरिक्त आय प्राप्त कर सकते हैं।

परवल की बढ़ती उपयोगिता

परवल, कद्दूवर्गीय महत्वपूर्ण सब्जी मानी जाती है। इसकी उपलब्धता फरवरी से प्रारंभ होकर दिसंबर तक बाजार में होती हैं। निर्यात की दृष्टि से परवल एक महत्वपूर्ण सब्जी हैं। उत्तर प्रदेश एवं बिहार के मैदानी भागों में इसकी खेती सिंचित दशा में की जाती है, जबकि नदियों के किनारे बिहार, उत्तर प्रदेश आदि जगहों में की जाती हैं, जिसे रिवर बेड कल्टीवेशन के नाम से भी जाना जाता है। इस तरह की खेती दियारा जमीन पर की जाती हैं, जहां हर साल नई मिट्टी नदियों द्वारा जमा होती हैं। परवल अत्यंत ही सुपाच्य, पौष्टिक, स्वास्थवर्द्धक एवं औषधीय गुणों से भरपूर एक लोकप्रिय सब्जी है। इसका फल अंडाकार, चिकना, 5–12 सैं.मी. लंबा तथा 2–6 सैं.मी. व्यास का होता है। फल पर कभी–कभी धारियां भी बनती हैं। इसके फल को पेपो कहा जाता है। इसका प्रयोग मुख्य रूप से सब्जी, आचार और मिठाई बनाने के लिए किया जाता है।

परवल को देश के विभिन्न भागों में अलग–अलग नाम से जाना जाता है, जैसे परवल, पलवल, पटल, परोरा या परमाल आदि। निर्यात की दृष्टि से परवल एक महत्वपूर्ण सब्जी है। इससे अच्छी विदेशी मुद्रा प्राप्त की जा सकती है। इसकी उपलब्धता फरवरी से प्रारंभ होकर दिसंबर तक बाजार में होती हैं।

पोषकीय महत्व :– परवल औषधीय गुणों से भरपूर सब्जी है। यह अत्यंत ही सुपाच्य, स्वास्थ्यवर्द्धक और पौष्टिक सब्जी है। इसका उपयोग हृदय एव मूत्र संबंधी रोगों में किया जाता है। इसके कच्चे एवं मुलायम फलों को सब्जी के लिए प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त इसकी मुलायम शाखाओं एवं पत्तियों का उपयोग सूप बनाने में किया जाता है। देश के कुछ भागों में इसके फलों से मिठाई भी तैयार की जाती है। इसमें पर्याप्त मात्रा में खनिज एवं लौह पाया जाता है। इसमें पाए जाने वाले पोषक तत्व सारणी–1 में दिए गए हैं।

उद्‌गम एवं वितरण :– परवल भारतीय मूल का पौधा है और संभवत: बंगाल इसका उद्‌गम स्थल है। इसकी खेती की जाने वाली किस्मों में विविधता असोम–बंगाल क्षेत्र में ज्यादा होती है। यह स्पष्ट करता है कि इसकी उत्पत्ति भारत में हुई है। इसको पश्चिम बंगाल, ओडिशा, असोम, बिहार, झारखंड एवं उत्तर प्रदेश में बहुतायत से उगाया जाता है। इसका सर्वाधिक उत्पादन बिहार में होता है।

वानस्पतिक वितरण :– परवल का वंश ट्रायकोसैंथस एवं प्रजाति डाइवोका है। परवल उष्णकटिबंधीय, बहुतवर्षीय एकलिंगाश्रयी एवं लतादार शाकीय फसल है। पौधे की लंबाई 6–8 मीटर होती है। इसे एक बार लगाने के बाद यह उसी स्थान पर कई वर्षों तक पुष्पन एवं फलत करता है। इसकी पत्तियां हृदयाकार, लंबी एवं आधार पर संकरी होती हैं। पत्तियों के कक्ष से तंतु निकलते हैं। इसकी जड़ें कंदील एवं लंबी होती है। जड़ें एवं तना, दोनों में नये पौधे को जन्म देने की क्षमता होती है। इसकी लताएं पेंसिल के आकार की गहरी हरी होती हैं। यह एकलिंगाश्रयी पौधा है अर्थात नर एवं मादा पुष्प अलग–अलग पौधे पर आते हैं। पत्तियों के कक्ष से नर एवं मादा पुष्प विकसित होते है। नर पुष्प शीघ्र आना प्रारंभ होते हैं, जबकि मादा पुष्प देर से आते हैं। अच्छी फलत के लिए नर एवं मादा पौधों का अनुपात 1:10 रखा जाता है। मादा पुष्प में 1–5 अंडज (सामान्यत: 3 तक) विकसित होते हैं। इसके पुष्प नलिकाकार एवं सफेद रंग के होते हैं। इसमें प्रथम पुष्पन कलिका निकलने से 16–20 घंटे बाद होता है, जबकि मादा पुष्प 10–15 घंटे बाद निकलते है। अगर तापमान कम है तो पुष्पों का विकास 8–10 घंटे देर से होता है। परवल के नर व मादा पुष्प के खिलने का समय 7–9 बजे सुबह होता है। मादा पुष्प खिलने के 8–10 घंटे पूर्व से लेकर 48–50 घंटे पश्चात तक वर्तिकागत सुग्राह्य बना रहता है।

फल गोलाकार या अंडाकार, चिकने 5.0–12.0 सैं.मी. लंबे तथा 2–6 सैं.मी. व्यास के होते हैं। इसका फल पेपो कहलाता है। फल का गूदा सफेद या क्रीमी सफेद होता है। यह पकने पर पीले रंग का हो जाता है। फल पर कभी-कभी धारियां बनती हैं। इसका खाने वाला भाग पेरिकार्य तथा मिजोकार्प का संयुक्त भाग होता है। इसके गूदे में सख्त बीज बनते हैं और बीज गोलाकार होते हैं, जिसे ग्लोबोज कहा जाता है। बीज काले रंग के होते हैं।

जलवायु :– परवल की खेती के लिए आर्द्र एवं गर्म जलवायु की आवश्यकता होती है। इसकी खेती सामान्यत: उन स्थानों पर होती है, जहां औसतन तापमान 25–35° सेल्सियस तथा औसतन वार्षिक वर्षा 1500–2000 मि.मी. होती है। पौधे की अच्छी पैदावार के लिए 21–27° सैल्सियस तापमान उपयुक्त माना जाता है। अगर तापमान 5° सैल्सियस से नीचे आ जाता है तो पौधों का विकास प्रभावित होता है। इसलिए ज्यादा ठंडक पड़ने पर पौधें का ऊपरी भाग सूख जाता है और सुसुप्तावस्था में चला जाता है। जब तापमान मध्य फरवरी में बढ़ने लगता है, तो पौधे में वृद्धि होने लगती हैं। पौधे में फलत फरवरी-मार्च से लेकर अक्तूबर नवंबर तक चलता है। इसकी वृद्धि के लिए कम पानी की आवश्यकता होती है, परंतु जलमग्न अवस्था में यह सड़कर समाप्त हो जाता है।

सारणी 1. परवल में पाये जाने वाले पोषक तत्व (प्रति 100 ग्राम खाने योग्य भाग में)

पोषक तत्व	मात्रा
जल	92.0 ग्राम
ऊर्जा	20 कि. कैलोरी
प्रोटीन	1.3 ग्राम
वसा	0.3 ग्राम
खनिज	0.5 ग्राम
रेशा	3.0 ग्राम
कार्बोहाईड्रेट	2.5 ग्राम
कैल्शियम	30 मि.ग्रा.
फॉस्फोरस	40 मि.ग्रा.
लोहा	1.7 मि.ग्रा.
कैरोटीन	153 माईक्रो ग्राम
पोटेशियम	83 मि.ग्रा.
थाईमिन	0.05 मि.ग्रा.
राईबोफ्लेविन	0.06 मि.ग्रा.
नियासिन	0.5 मि.ग्रा.
विटामिन 'सी'	29 मि.ग्रा.

भूमि की तैयारी :– यह बहुवर्षीय सब्जी है। इसे एक बार लगाने पर 3–4 वर्षो तक लगातार उपज मिलती रहती है। अत: मृदा संरचना एवं उर्वरता का प्रभाव इसकी उपज पर पड़ता है। ऐसी मृदा जिसकी संरचना बलुई दोमट तथा जिसमें कार्बनिक पदार्थ पर्याप्त मात्रा में हो, इसकी खेती के लिए उत्तम होती है। मृदा का पी–एच मान 6. 0–6.5 तक उत्तम है। इसकी खेती नदियों के किनारे अधिक मात्रा में की जाती है, क्योंकि वहां मृदा की उर्वरता ज्यादा होती है।

खेत तैयार करने के लिए मई/जून के महीने में 2–3 बार गहरी जुताई कर पाटा चलाना चाहिए। पुन: जुन-जुलाई में 2–3 बार गहरी जुताई हैरो या कल्टीवेटर से करनी चाहिए। खेत की अंतिम जुताई के समय 20–25 टन प्रति हैक्टेयर गोबर की सड़ी खाद या वर्मीकम्पोस्ट मिलाना चाहिए।

पौध प्रसारण :– परवल का प्रसारण बीज एवं वानस्पतिक, दोनों विधियों द्वारा किया जाता है:

बीज द्वारा प्रसारण :– सामान्यतया बीज द्वारा प्रसारण किया जाता है, क्योंकि इसमें 50 प्रतिशत पौधे नर होते है तथा पुष्पन एवं फसल की क्रिया देर से आरंभ होती है। अगर बीज द्वारा प्रसारण किया जाता है तो बीज की बुवाई जून-जुलाई में की जाती है तथा एक हैक्टेयर के लिए 20–25 कि. ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है।

वानस्पतिक विधियां

*** जड़ कर्तन द्वारा प्रसारण :–** इस विधि को अधिकतर किसानों द्वारा अपनाया जाता है। इस विधि में एक वर्ष पुरानी तने की लताओं से विकसित जड़ें खेत में जगह–जगह स्वत: तैयार होती है, जिसे किसान वहां से हटाकर वांति दूरी पर खेत में लगाते है।

*** तना कर्तन द्वारा प्रसारण :–** परवल के प्रसारण के लिए इस विधि का प्रयोग व्यावसायिक रूप से किया जाता है। इस विधि से प्रसारण करने के लिए 60–90 सैं. मी. लंबे तने, जिसमें 10–15 गांठें हों, उत्त्म माने जाते है। इस प्रकार पौध प्रसारण अक्तूबर में बड़े पैमाने पर किया जाता है। शीतोष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों में एकवर्षीय पूर्णतया पके तने को लेकर पौधे तैयार करके मुख्य खेत में लगाते है।

*** पौधशाबला में परवल की पौध तैयार करना :–** कभी-कभी परवल की पौध को पौधशाला में तैयार किया जाता है। इसके लिए पॉलीथीन की 15×10 सैं.मी. आकार की 100 गेज मोटी थैलियों का उपयोग किया जाता है। इन थैलियों में मिट्टी, बालू एवं सड़ी हुई गोबर की खाद 1:1:1 के अनुपात में मिलाकर मिश्रण को इनमें भरा जाता है। इसमें मात्र 15 सैं.मी. लंबे तने ही लगाए जाते हैं, जिनमें 4–5 गांठें हों। पौधों में जमाव 30 दिनों के अंदर आरंभ

शेष पृष्ठ 8 पर

परवल की उन्नत किस्में

परवल की अनेक स्थानीय किस्में पाई जाती है। इनमें से प्रमुख किस्में काशी अलंकार, स्वर्ण अलौकिक, राजेंद्र परवल-1, राजेंद्र परवल-2, फैजाबाद परवल-1, फैजाबाद परवल-2, फैजाबाद परवल-3 और काशी जागृति हैं।

परवल की अनेक स्थानीय किस्में क्षेत्र विशेष में उगाई जाती हैं। इन्हीं के आधार पर निम्नलिखित चार वर्गो में बंटा है:

वर्ग-1 :– इस वर्ग में वे किस्में आती है, जिनके फल 10-13 सैं.मी. लंबे व गहरे हरे रंग के होते है।

वर्ग-2 :– इस समूह के किस्म के फल की लंबाई 10-16 सैं. मी. होती है। छिलके हरे रंग के और उस पर हल्की सी पीले रंग की पट्टी होती है।

वर्ग-3 :– फलों की लंबाई 5-8 सैं.मी. होती है।

वर्ग-4 :– इस समूह के फलों की लंबाई 3 सैं.मी. से कम होती है। छिलके गहरे हरे रंग के होते हैं और दोनों किनारे नुकीले होते हैं।

स्वर्ण आलौकिक : इस किस्म को झारखंड, बिहार, ओडिशा, पूर्वी उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल में खेती के लिए उपयुक्त माना गया है। इसके रोपण का समय 15 सितंबर-15 नवंबर है। इससे उपज 25-30 टन/हैक्टेयर प्राप्त होती है।

*** स्वर्ण रेखा :–** इस किस्म को झारखंड, बिहार, ओडिशा, पूर्वी उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल में खेती के लिए उपयुक्त माना गया है। इसके रोपण का समय 15 सितंबर-15 नवंबर है। उपज 30-35 टन/हैक्टेयर होती है।

*** काशी अलंकार :–** यह किस्म भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी से आई है। इसके फल लंबे और हल्के रंग के होते है। फलों में बीज की मात्रा कम और गूदा ज्यादा होता है।

*** राजेंद्र परवल-1 :–** इस किस्म का विकास राजेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, साबौर (बिहार) से किया गया है। इसके फल बड़े और पट्टीदार हरे रंग के होते हैं। इसकी औसत उपज 14-15 टन प्रति हैक्टेयर है।

*** राजेंद्र परवल-2 :–** इस किस्म का विकास राजेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, साबौर (बिहार) से किया गया है। इसके फल गहरे हरे रंग तथा सफेद पट्टीदार होते है।

*** फैजाबाद परवल-1 :–** परवल की इस किस्म का विकास नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, फैजाबाद द्वारा किया गया है। इसके फल आकर्षक और हरे रंग के होते हैं।

*** फैजाबाद परवल-3 :–** परवल की इस किस्म का विकास नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, फैजाबाद द्वारा किया गया है। इसके फल आकर्षक और तकुआनुमा हरे रंग के तथा कम पट्टीदार होते हैं।

*** फैजाबाद परवल-4 :–** परवल की इस किस्म का विकास नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, फैजाबाद द्वारा किया गया है। इसके फल तकुआनुमा हरे रंग के तथा किनारे पतले होते हैं।

*** काशी जागृति :–** यह किस्म भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश) से आया है। इसके फल लंबे और हल्के रंग के होते हैं। इस फल में बीज नहीं बनता है और लगाते समय नर पौधों की आवश्यकता नहीं होती है। इसकी औसत उपज 8-10 टन प्रति हैक्टेयर है।

सब्ज़ी फसलों में कीट नियंत्रण

हरियाणा राज्य में सब्ज़ी फसलों के अंतर्गत बैंगन, टमाटर, मिर्च, प्याज़, लहसुन, गोभी एवं बेल वाली सब्ज़ियां मुख्य रूप से बोई जाती हैं। इन फसलों में कीटों द्वारा अत्याधिक हानि होती है। इन कीटों से बचाव के लिए किसान अंधाधुंध कीटनाशकों का प्रयोग करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप किसानों की लागत बढ़ने के साथ इन कीटनाशकों के अवशेष सब्ज़ियों में अधिक रह जाते हैं। जो उपभोक्ता के लिए हानिकारक होते हैं और साथ ही कीटनाशकों द्वारा लाभकारी मित्र कीटों की भी हानि होती है। वैसे देखा जाए तो प्रत्येक फसल में एक या दो ही मुख्य कीट होते हैं, जिनकी संख्या आर्थिक कगार पर रहती है अन्यथा गौण कीट फसलों में इतनी हानि नहीं पहुंचाते हैं। अतः किसानों को कीटों की उपस्थिति मात्र से ही यह नहीं समझना चाहिए कि यह कीट हानिकारक हैं और कीटनाशक का प्रयोग शुरू नहीं करना चाहिए। किसानों को इन फसलों में लगने वाले कीटों की जानकारी होना ज़रुरी है।

बैंगन के मुख्य कीट : बैंगन में मुख्य रूप से हरा तेला, सफेद मक्खी, तना एवं फल छेदक, हाड्डा बीटिल व अष्टपदी का प्रकोप होता

है।

इस फसल का मुख्य कीट तथा एवं फल छेदक कीट है। इस कीट द्वारा कभी-कभी फसल में 50-100 प्रतिशत क्षति होती है। इस कीट को सुंडी फसल को नुकसान करती है। यह सुंडी गुलाबी रंग की होती है। फल आने से पहले कोंपलों में छेद करके अंदर पनपती है, जिससे कोंपलें मुरझा कर नीचे लटक जाती है और सूख जाती है। बाद में फलों के अंदर जाकर फलों को काना कर देती है। एक सुंडी 4-6 फलों को काना कर सकती है। इस कीट का अधिक प्रकोप मई से अक्तूबर तक होता है। इस कीट के प्रौढ़ मर्च-अप्रैल महीने से प्रकट होना शुरू कर देते हैं तथा 80-120 सफेद रंग के अंडे अकेले या 2-3 के झुंड में पत्ती की निचली सतह, हरे तने पर या फूल की कालिका पर देते हैं।

तना एवं फल छेदक कीट का नियंत्रण :

1. फूल आने से पहले जैसे ही इस कीट का प्रकोप शाखाओं पर दिखाई पड़े तो 75 ग्राम स्पाइनोसेड 45 एस.सी. को प्रति एकड़ 80 लीटर पानी में मिला कर 15 दिन के अंतर पर छिड़काव करें।

2. बीज की फसल के लिए प्रोक्लेम 5 एस.जी. 56 ग्राम प्रति एकड़ के तीन छिड़काव करें।

3. कीट ग्रसित शाखाओं, फलों को तोड़कर ज़मीन में गहरा दबा दें।

मिर्च के मुख्य कीट : मिर्च फसल पर हरा तेला, सफेद मक्खी, दीमक और अष्टपदी का प्रकोप

होता है। कभी-कभी मिर्च के फलों के अंदर फली छेदक कीट का आक्रमण भी होता है। रस चूसने वाले कीटों के कारण मिर्च में पत्तों का रंग पीला पड़ जाता है, पौधे कमज़ोर हो जाते हैं। यह कीट मरोड़िया नामक विषाणु रोग फैलाते हैं।

चुरड़ा एवं अष्टपदी की रोकथाम के लिए फसल पर 400 मिलीलीटर मैलाथियान 50 ई.सी. का छिड़काव 200-250 लीटर में मिला कर प्रति एकड़ 15-20 दिनों के अंतर पर करें।

टमाटर के मुख्य कीट : टमाटर में मुख्य रूप से सफेद मक्खी, चेपा एवं फल छेदक कीट का प्रकोप होता है, इसमें सफेद मक्खी द्वारा फसल में विषाणु रोग मरोड़िया का प्रकोप होता है, जिसके कारण पौधे छोटे रह जाते हैं। फल छेदक कीट की सुंडी हरे पीले भूरे रंग की दोनों ओर सफेद धारियां होती है। ये सुंडियां कोमल पत्तियों को खाती हैं और कलियों, फूलों व फलों में सुराख कर देती है। ग्रसित फल बाद में सड़ जाते हैं। टमाटर के अलावा यह कीट चना, अरहर, मिर्च, कपास, सूरजमुखी में भी नुकसान करता

है।

इस कीट का प्रकोप होने पर निम्नलिखित दवाओं का 15 दिन के अंतर पर छिड़काव करें।

(क) (1) 75 मिलीलीटर फेनवेलरेट 20 ई.सी. (2) 200 मिलीलीटर डेल्टामेथ्रिन 2-8 ई.सी. (3) 60 मि.ली. सायपरमेथ्रिन 25 ई.सी.।

(ख) मध्य मार्च के आस-पास पत्तों पर फल छेदक कीट के अंडे दिखाई दें तो 20000 ट्राईकोग्रामा किलोनिस परजीवी के अंडे छोड़ें व इसके चार दिन बाद पुनः 20000 परजीवी प्रति एकड़ फसल पर छोड़ें। इसके बाद पुनः 20000 परजीवी प्रति एकड़ फसल पर छोड़ें। इसके बाद 10-10 दिन के अंतर पर 1 लीटर निंबीसिडीन, 400 ग्राम बेसिलस थुरीजेनसिस को 200 लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करें।

प्याज़-लहसुन में लगने वाले कीट : इन फसलों पर मुख्य रूप से चुरदा (थ्रिप्स) का आक्रमण होता है। यह कीट पीले भूरे बेलन आकार के शिशु व प्रौढ़ पत्तों से रस चूसते है। ग्रसित पत्ते पर सफेद धब्बे पड़ जाते हैं। बाद में पत्ते मुड़ जाते हैं। अधिक प्रकोप होने पर पत्ते चोटी से चांदीनुमा (सिल्वरी टॉप) होकर सूख जाते हैं। फूल

उगने के समय इस कीट के प्रकोप से बीज की पैदावार पर अधिक असर पड़ता है। इस कीट का प्रकोप फरवरी से मई तक अधिक रहता है।

नियंत्रण :

(क) (1) 75 मिलीलीटर फेनवेलरेट 20 ई.सी. (2) 175 मिलीलीटर डेल्टामेथ्रिन 2-8 ई.सी. (3) 60 मि.ली. सायपरमेथ्रिन 25 ई.सी./150 मिलीलीटर सायपरमेथ्रिन 10 ई.सी.।

(ख) 300 मिलीलीटर मैलाथियान 50 ई.सी.।

(ग) इस कीट की रोकथाम के लिए लहसुन का तेल 150 मिलीलीटर व इतनी मात्रा टी पोल की 120-160 लीटर पानी में मिला कर प्रति एकड़ 3-4 छिड़कव 10 दिन के अंतर पर करें।

गोभीवर्गीय फसलों के मुख्य कीट : इस वर्ग की फसलों में मुख्य रूप से डायमंड बैक मॉथ, तंबाकू की सुंडी, बंदगोभी की सुंडी, कुबड़ा कीड़ा व चेपा का आक्रमण होता हे। डायमंड बैक मॉथ प्रमुख कीट है, इस कीट का लार्वा हरे रंग का छोटा सा होता है। जो ज़रा-सा छूने पर एकदम से उछल पड़ता है। इसकी छोटी सुंडियां पत्तियों को खुरच-खुरच कर खाती है तथा सिर्फ सफेद झिल्ली छोड़ देती है। बड़ी सुंडियां गोल सुराख बनाती हैं। इस कीट का प्रकोप अगस्त से शुरू होता है।

नियंत्रण : इस कीट के प्रकोप होने पर 400 ग्राम बेसिलस थुरीजेनसिस (बायोआप्स) घु.पा. या 60 मिलीलीटर डाईक्लोरवॉस (नुवान) 76 ई.सी. या 400 मिलीलीटर को 200-250 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें। अगला छिड़काव 7-10 दिन में दोहराएं। इस कीट का प्रकोप कम

करने के लिए ट्रैप फसल के रूप में सरसों लगाएं।

तंबाकू की सुंडी व बंदगोभी की सुंडी कीट की छोटी सुंडियां शुरूआती अवस्था में फसल में एक जगह रह कर नुकसान करती हैं। बाद की अवस्था में सारे खेत में फैल जाती है। अतः इन कीटों की सुंडियों को इकट्ठा करके मार दें तथा अंड समूह को पत्तों सहित तोड़ कर ज़मीन में दबा दें। इन कीटों के लिए 400 मिलीलीटर मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें।

बेल वाली सब्ज़ियों के मुख्य कीट : इन फसलों में लालड़ी, चेपा, अष्टपदी व फल मक्खी का आक्रमण होता है। लालड़ी व फल मक्खी मुख्य कीट है, जो सभी प्रकार की बेल वाली सब्ज़ियों में नुकसान करती है।

लालड़ी : इस कीट के प्रौढ़ पीले रंग के चमकीले होते हैं तथा सुंडियां क्रीम रंग की होती हैं। प्रौढ़ पत्तों पर गोल सुराख करती है तथा सुंडियां ज़मीन में रह कर जड़ें काट कर पौधों को नुकसान पहुंचाती हैं। मार्च के दूसरे पखवाड़े से अप्रैल के पहले पखवाड़े तक तथा मध्य-जून से अगस्त तक इस कीट का अधिक प्रकोप रहता है।

नियंत्रण :

1. इस कीट का प्रकोप होने पर 5 किलोग्राम कार्बोरिल 5 डी

+ 5 किलोग्राम राख का प्रति एकड़ धूड़ा करें।

2. 25 मिलीलीटर साईपरमेथ्रिन 25 ई.सी. या 60 मिलीलीटर साईपरमेथ्रिन 10 ई.सी. , 30 मिलीलीटर फैनवलरेट 20 ई.सी., 100 ग्राम कार्बोरिल 50 घु.पा. को 100 लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करें।

3. लालड़ी की लटों से बचाव के लिए 1-6 लीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. को बुवाई में एक माह बाद सिंचाई के साथ लगाएं।

फल मक्खी : यह कीट कोमल फलों के गुदे में अंडे देती है। अंडों से बिना सिर पैर के गैगट्स निकल कर फल में गुदे को खाते है, जिसके कारण फल खराब हो जाते हैं।

रोकथाम : इस कीट का प्रकोप होने पर 400 मिलीलीटर मैलाथियान 50 ई.सी. या 500 ग्राम कार्बोरिल 50 घु.पा. को 200-250 लीटर पानी तथा 1-25 किलोग्राम गुड़ में मिला कर छिड़काव करें।

1. सिफारिश की गई कीटनाशक ही डालें, क्योंकि बेल वाली सब्ज़ियां कुछ अन्य कीटनाशकों से जल जाती हैं।

2. ओस के समय धूड़ा ना करें।

3. 8-10 मीटर की दूरी पर मक्का की कतारें लगाएं क्योंकि इस पर फल मक्खी इकट्ठी होकर बैठती हैं।

4. काणे और सड़े फल इकट्ठे कर मिट्टी में गहरा दबा दें। ❑

मिर्च के प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

डॉ. अभिषेक शुक्ला, कीट विज्ञान विभाग, न.म. कृषि महाविद्यालय, नवसारी कृषि विश्वविद्यालय, नवसारी–396450 (गुजरात)

हमारे देश में मिर्च एक नकदी वाली फसल है। इसकी व्यवसायिक खेती करके अधिक लाभ कमाया जा सकता है। यह हमारे खाने में इस्तेमाल होती है। मिर्च में विटामिन ए और सी पाए जाते हैं और कुछ लवण भी होते हैं। मिर्च का इस्तेमाल आचार, मसालों और सब्ज़ी में भी किया जाता है। मिर्च की फसल को अनेक कीटों तथा नाशी जीवों का प्रकोप होता है, जो ना केवल उत्पादन में कमी करते हैं, बल्कि गुणवत्ता को भी खराब करते हैं। प्रस्तुत लेख में मिर्च के इन्हीं नाशीकीटों के विषय में जानकारी दी गई है, जो मिर्च उत्पादकों के लिए फायदेमंद साबित होगी।

मिर्च की फसल में एकीकृत कीट प्रबंधन

1. मिर्च के रस चूसक कीट :

थ्रिप्स : इस कीट का वैज्ञानिक नाम (सिरटोथ्रिप्स डोरसेलिस) है। यह छोटे-छोटे कीट, पत्तियों एवं अन्य कोमल मुलायम भागों से रस चूसते हैं। इसका आक्रमण प्राय: रोपाई के 2 से 3 सप्ताह बाद आरम्भ हो जाता है। फूल लगने के समय इस कीट का प्रकोप बहुत अधिक हो जाता है, जिससे पौधों की पत्तियां सिकुड़ जाती हैं तथा मुरझा कर ऊपर की ओर मुड़ जाती हैं तथा दूर से देखने पर नाव के आकार की दिखाई देती है। थ्रिप्स द्वारा क्षति ग्रसित पौधों को देखने से मौज़ेक रोग (विषाणु रोग) का भी भ्रम होता है। पौधे की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। उपज बहुत कम हो जाती है तथा उपज की गुणवत्ता में भी कमी आ जाती है।

माहू (एफिड) : इस कीट का वैज्ञानिक नाम *एफिस गोसीपी* है। यह कीट पत्तियों एवं पौधों के अन्य कोमल भागों से रस चूस कर पत्तियों एवं कोमल भागों पर मधुरस स्त्राव करते हैं, जिससे काले रंग की शूटी मोल्ड (काली फफूंदी) विकसित हो जाती है, जो प्रकाश संश्लेषण में बाधा उत्पन्न करके पौधों की बढ़वार को प्रभावित करती है, जिसके परिणामस्वरूप फल काले पड़ जाते हैं। यह कीट मौज़ेक (विषाणु) रोग के वाहक का काम भी करता है।

सफेद मक्खी : इस कीट का वैज्ञानिक नाम *बेमेसिया टेबेसाई* है। इस कीट के शिशु (निम्फ) एवं वयस्क पत्तियों की निचली सतह से रस चूसते हैं। कीट पर्ण कुंचन रोग का वाहक होता है तथा एक पौधे से दूसरे पौधे में फैलाते हैं।

नियंत्रण : * कीट प्रकोप को प्रारम्भिक अवस्था में नीम तेल 5 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें।

* डायमिथोएट 30 ई.सी. या ट्राइज़ोफॉस 40 ई.सी. की 30 मिलीलीटर मात्रा तो 15 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें।

* कीट के अत्याधिक प्रकोप की अवस्था में 15 ग्राम एसीफेट या इमिडाक्लोप्रिड 5 एस.एल. की 5 मिलीलीटर मात्रा 15 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें।

पीली माईट : इस कीट का वैज्ञानिक नाम पोलीफेगोटारसोनेमस लेटस है। यह छोटे-छोटे जीव होते हैं, जिनमें चार जोड़ी पैर होते हैं तथा ये पत्तियों की निचली सतह पर पाए जाते हैं और वहीं से लगातार रस चूसते रहते है, जिसके परिणामस्वरूप पत्तियां सिकुड़ कर नीचे की ओर मुड़ जाती है। पीली माईट के कारण पौधे की बढ़वार कम हो जाती है तथा उत्पादन में भी कमी आ जाती है।

नियंत्रण : मिर्च की पीली माईट प्रतिरोधक किस्मों का चयन बुवाई के लिए करना चाहिए। मिर्च में परभक्षी माईट (ऐम्बलीसीयस प्रजाति) भी पाई जाती है, जो पीली माईट की प्राकृतिक शत्रु है तथा इसकी संख्या को कम करने में मदद करती है। रासायनिक माईटीसाईड्स जैसे प्रोपरगाईट 57 प्रतिशत ई.सी. अथवा क्लोरफेनापायर 5 मिलीलीटर/लीटर या एबामेक्टिन 1.5 मिलीलीटर प्रति लीटर या स्पाइरोमेसिफेन 0.75 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करके भी इस माईट का नियंत्रण किया जा सकता है।

2. बेधक कीट :

पत्ती तथा फल छेदक : इस कीट का वैज्ञानिक नाम *स्पेडोप्टेरा लिटुरा* है। शुरूआत में इल्लियां पत्तियों को खाती हैं तथा बाद में इल्लियां फलों में छिद्र करके नुकसान पहुंचाती है। यह फलों में गोल छिद्र बना कर उसके अंदर के भाग को खाती है। परिणामस्वरूप फल असमय ही झड़ जाते हैं। इस कीट के कारण मिर्च उत्पादक किसानों को भारी नुकसान उठाना पड़ता है।

नियंत्रण :

* इस कीट की प्रारम्भिक अवस्था में नीम तेल 5 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें।

* स्पाइनोसेड 4 मिलीलीटर या इंडोक्साकार्ब 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें।

हरी सुंडी : इस कीट का वैज्ञानिक नाम हेलिकोवार्पा आर्मीज़ीरा है। ये एक सर्वभक्षी कीट है, जो मिर्च के फलों में घुस कर उनको अंदर ही अंदर खा कर खराब कर भारी नुकसान करता है। छोटी अवस्था में सुंडियां पत्तियों तथा फूलों को भी खाकर मिर्च में नुकसान करती है।

नियंत्रण : * नर पतंगों को आकर्षित करके मारने हेतु फेरोमोन ट्रेप लगाने चाहिए। प्रति हैक्टेयर 40 ट्रेप लगाना फायदेमंद होता है।

* इस कीट की प्रारंभिक अवस्था में नीम तेल 5 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें।

* स्पाइनोसेड 4 मिलीलीटर या इंडोक्साकार्ब 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें।

शेष पृष्ठ 6 की

परवल की बढ़ती उपयोगिता

हो जाता है और 45 दिनों के अंदर जड़ें विकसित हो जाती है। थैली भरते समय ध्यान रखना चाहिय कि उसमें 4–5 छिद्र थैली के नीचे एवं बाहरी दीवारों पर करने चाहिए, जससे अतिरिक्त पानी देने पर आसानी से बाहर निकल जाए। इस प्रकार 2–3 महीनों में लगाने योग्य पौधे तैयार हो जाते है। इस विधि द्वारा तैयार पौधे का रोपण करने से मुख्य खेत मं शत–प्रतिशत पौध स्थापित की जा सकती है।

पौध रोपण का समय :– परवल लगाने का उत्तम समय मध्य नक्षत्र है, जो अगस्त के आसपास होता है। नदियों के किनारे (दियारा में) परवल को अक्तूबर–नवंबर में लगाया जाता है। दियारा क्षेत्र में प्रत्येक वर्ष नई फसल लगानी पड़ती है, क्योंकि बाढ़ में फसल नष्ट हो जाती हैं।

रोपण विधि एवं अंतराल :– परवल को दो विधियों द्वारा लगाया जाता है:

सीधी लता विधि :– इस विधि में 30 सैं.मी. गहरी नालियां बनाई जाती हैं और नाली में पर्याप्त मात्रा में खाद मिलाई जाती है। इन्हीं नालियों में 2 मीटर के अंतराल पर भूमि की सतह से 15 सैं.मी. की गहराई पर लंबाई में फैलाकर कलमें रोप दी जाती है। इस विधि में एक हैक्टेयर क्षेत्रफल में 2500 कलमें लगती हैं।

थाला विधि :– इस विधि से रोपाई के लिए 2–2 मीटर के अंतराल पर ऊंचे उठे हुए थाले बनाए जाते है। कलमों की लच्छी बनाकर इन्हीं थालों में लगाई जाती है।

नर व मादा पुष्प का अनुपात :– एकलिंगी पौधा होने के कारण परवल का अनुपात सही होना आवश्यक है। जब खेत में नर व मादा पौधे का अनुपात सही नहीं होता तो मादा पुष्प बिना परागण के हल्के पीले अंत में भूरे के होकर गिर जाते है। इससे उपज प्रभावित होती है। हम सब जानते है कि नर पौधों से उपज प्राप्त नहीं होती है, परंतु ये परागण के लिए आवश्यक होते है और बिना परागण के मादा से उपज लेना असंभव है। अत: खेत में नर व मादा पौधों का अनुपात 1:10 का होना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक :– खेत की तैयारी के समय 10–15 टन सड़ी हुई गोबर की खाद मिला दी जाती है। मेड़ों पर गड्ढे 40×40×40 सैं.मी. आकार के बनाते है। प्रत्येक गड्ढे में 4–6 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 50 ग्राम यूरिया, 100 ग्राम डीएपी तथा 80 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश, 100 ग्राम नीम की खली मिलाकर भर देते हैं। पुर: मई व जुलाई में गुड़ाई करने के बाद प्रत्येक पौधे को 80 ग्राम यूरिया देते हैं तथा मिट्टी चढ़ा देते हैं। इसी मात्रा में खाद व उर्वरक दूसरे व तीसरे वर्ष में फलत लेने के लिए देते हैं।

सिंचाई व अन्य सस्य क्रियाएं :– रोपण के पश्चात हल्की सिंचाई की आवश्यकता होती है। इससे कलम सूखने से बची रहती है एवं अच्छी तरह से स्थापित हो जाती है। बरसात के मौसम में नियमित बरसात होने से सिंचाई रोक देते हैं। प्रारंभिक अवस्था में पौधों की लताओं के सुचारू रूप से बढ़ने के लिए आवश्यक है कि खेत की निराई–गुड़ाई की जाए।

सहारा देना :– परवल की लताओं को बांस, लकड़ी, या मचान पर चढ़ाने से फलत अच्छी होती है। इससे फलों की तुड़ाई में भी काफी सुविध मिलती है। इसके लिए जब बेलें 30 सै.मी. बढ़वार की हो जाएं, उस समय रस्सी के सहारे मचान पर इन्हें चढ़ा देना चाहिए।

कटाई–छंटाई :– जाड़े में परवल की बेलें सूखने लगती हैं और पौधे सुसुप्तावस्था में चले जाते हैं। इसलिए लताओं की कटाई अक्तूबर–नवंबर में मुख्य तने के

पास 10–15 सैं.मी. भाग को छोड़कर की जाती है। तने के पास गोबर की सड़ी हुई खाद डालकर पुआल से ढक देते हैं।

फल की तुड़ाई एवं उपज :– परवल के पौधे जो पहली बार अक्तूबर–नवंबर में लगाए जाते है, वे अप्रैल–मई में फलते है और सितंबर–अक्तूबर तक फलते रहते हैं। नदियों के किनारे दियारा में लगाए गए पौधों पर फल फरवरी में ही आने लगते हैं। पौधों पर फल लगने के 15 दिनों बाद पूर्ण विकसित फलों की तुड़ाई करनी चाहिए। समय से फलों की तुड़ाई करते रहने से फल अधिक संख्या में लगते रहते हैं। पहले वर्ष औसतन उपज 10–12.5 टन तथा दूसरे वर्ष 22–25 टन प्रति हैक्टेयर प्राप्त होती है।

प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन

एंथ्रेक्नोज :– यह एक फफूंदजनित रोग है। प्रारंभ में रोग से प्रभावित पौधों की पत्तियों पर छोटे–छोटे पीले धब्बे दिखाई देते है। इस रोग से बचाव के लिए मैंकोजेब की 2.5–3.0 ग्राम मात्रा प्रति लीटर की दर से पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

चूर्णिल असिता :– यह भी एक फफूंदजनित रोग है। रोग से प्रभावित पौधे की पत्तियों की सतह पर गोल सफेद पाऊडर जैसे धब्बे बनते है। ये आकार व संख्या में तेजी से बढ़ते है और कभी–कभी पूर्ण रूप से पट्टी को ढक लेते हैं। रोग से बचाव के लिए 0.06 प्रतिशत केराथेन नामक दवा का छिड़काव करना चाहिए। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि छिड़काव से पहले खाने योग्य फलों की तुड़ाई कर लें।

फल का पीला पड़ना :– प्राय: ऐसा देखा जाता है कि परवल का फल लगते ही पीला हो जाता है, जो पका जैसा दिखाई देता है और बाद में पौधे से टूट कर गिर जाता है। इसके दो प्रमुख कारण है:

* नर फूल की कमी के कारण परागण व गर्भाधान क्रिया का न होना। ऐसी दशा में नर व मादा पौधों को 1:10 अनुपात में लगाकर फल का पीला होना रोका जा सकता है। इसके अलावा यह सावधानी रखनी चाहिए कि फूल आने के समय किसी प्रकार की कीटनाशी दवा का प्रयोग दिन के समय न करें। अन्यथा परागण करने वाली मधुमक्खियों के मरने का डर रहता है। इसी कारण कीटनाशकों का प्रयोग सायंकाल करना चाहिए।

* फल मक्खी द्वारा विकसित हो रहे कोकल फलों के क्षतिग्रस्त होने से फल पीले पड़ जाते है। इसके लिए फल मक्खी का नियंत्रण करें। नियंत्रण के लिए मेलाथियान की 15 मि.ली. मात्रा के साथ 200 ग्राम गुड़ को 20 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने से कीट आकर्षित होते है और खाकर मर जाते है। इस दवा का छिड़काव एक हैक्टेयर में 200–300 पौधों पर किया जा सकता है।

प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

कद्दू का लाल कीड़ा :– इस रोग का प्रकोप परवल के कल्ले प्रस्फुटित होते ही आरंभ हो जाता है। इस रोग में कीड़ा पौधों की कलमों की नई कोमल पत्तियों को खाकर पौधों को नुक्सान पहुंचाता है। इसके फलस्वरूप पौधे आरंभ से ही कमजोर हो जाते हैं। रोग से बचाव के लिए कार्बोरिल की 2 ग्राम मात्रा प्रति लीटर की दर से पानी में घोलकर 15–20 दिनों के अंतराल में 2–3 बार छिड़काव करना चाहिए।

फल मक्खी :– इसमें वयस्क मक्खी विकासशील कोमल फलों में छेद करके फल के छिलके के नीचे अंडे देती है। इसका लार्वा फल के अंदर वृद्धि कर फलों को खाकर नष्ट कर देता है। इस रोग से बचाव के लिए कीटों को आकर्षित करके भी मारा जा सकता है। इसके लिए मेलाथियान की 20 मि.ली. मात्रा को 200 ग्राम गुड़ के साथ 20 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने से कीट आकर्षित होते हैं और चूसकर मर जाते है। इसका छिड़काव एक हैक्टेयर में से कुछ चुनिंदा (200–300) पौधों पर ही करना चाहिए।

थ्रिप्स :– थ्रिप्स आकार में छोटे व पंखहीन सफेद रंग के कीट होते है। ये पत्तियों का रस चूसकर फसल को कमजोर कर देते हैं। अधिक प्रकोप होने पर पत्तियों पर पीले रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। बचाव के लिए मोनोक्रोटोफॉस की 1.5 मि.ली. मात्रा को प्रति लीटर की दर से पानी में घोलकर 15–20 दिनों के अंतराल में 2–3 बाद छिड़काव करना चाहिए।

स्टेम बोरर :– यह कीट पौधों के मुख्य तने पर छेद बनाकर अंदर चला जाता है और अंदर सुरंग बनाकर पौधों की खाद्य आपूर्ति बंद कर देता है। इससे पौधे का शिखर सूख जाता है। इससे बचाव के लिए 10–15 ग्राम फ्यूराडोन 3 जी. का दाना पौधों की जड़ के पास 30–40 दिनों के अंतराल पर 2 बार डालते है। फ्यूराडोन का प्रयोग फल लगने के समय नहीं करते हैं।

फल उद्यान की स्थापना कैसे करें?

डॉ. प्रमोद कुमार (बागवानी विशेषज्ञ), कृषि विज्ञान केन्द्र, रामपुरा-रेवाड़ी (हरियाणा)

उद्यान लगाने से पूर्व उचित स्थान का चुनाव, पौधों का चुनाव, रोपण का समय एवं रोपण विधि की जानकारी होना अति आवश्यक है।

स्थान का चुनाव :

* उष्ण, उपोष्ण एवं सम-शीतोष्ण जलवायु के अनुसार फल वृक्षों का चुनाव करें।

* चयनित स्थान की मिट्टी एवं पानी की जांच अवश्य करवाएं।

* मृदा उद्यान का आधार है। अत: दोमट तथा बलुई मिट्टी का चुनाव करें।

* धरातल समतल होना चाहिए।

* भूमि में 2 मीटर गहराई तक कोई कठोर तथा कंकरीली तैय नहीं होनी चाहिए।

* सिंचाई तथा जल विकास का उचित प्रबंध होना चाहिए।

* कीट एवं बीमारियों से रहित स्थान का चुनाव करें।

* बाज़ार एवं यातायात की समुचित व्यवस्था हो।

* जंगल तथा ईंट के भट्ठों के पास के स्थान का चुनाव ना करें।

* उद्यान कार्यों के लिए रास्ते तथा निपुण मज़दूर जहां पर उपलब्ध हों।

फल-वृक्षों का चयन : * जलवायु, मिट्टी का पोषण स्तर, पी.एच. मान, पानी की गुणवत्ता एवं सिंचाई व जल निकास आदि का ध्यान रखते हुए पौधों का चयन करें।

* हमेशा कलमी पौधे ही किसी विश्वसनीय व प्रमाणित नर्सरी से खरीदें।

* पौधे कीट व बीमारियों से मुक्त होने चाहिए।

* पौधे नर्सरी से मिट्टी की पिंडी सहित निकाले गए हों, ताकि यातायात में कम से नष्ट हो।

* कलमी पौधों का रूट स्टोक भूमि तथा विषम परिस्थितियों के अनुरूप हो तथा बीज द्वारा तैयार किया गया है।

रोपण समय : उष्ण तथा उपोष्ण पौधों को बरसात में जुलाई से सितम्बर तक लगाते है। बसंत ऋतु में भी रोपण किया जा सकता है लेकिन अधिक देख-रेख की आवश्यकता होती है। समशीतोष्ण फल-वृक्षों का रोपण दिसम्बर से फरवरी तक करना अच्छा समझा जाता है। पौधे-रोपण हमेशा सायं:काल करें।

रोपण विधि : * सर्वप्रथम चयनित स्थान की सफाई एवं पौधों के उचित विकास के लिए आवश्यक रेखांकन विधि का चुनाव करें।

* उद्यान स्थापना से 2 माह पूर्व 1×1×1 मीटर आकार के गड्ढे पौधों के लिए आवश्यक दूरी के अनुसार खोदें।

* एक माह तक गड्ढे खुदे रहने के बाद 50 किलोग्राम गोबर की खाद तथा आवश्यकता अनुसार उर्वरक मिट्टी मिला कर भूमि की सतह से कुछ ऊंचाई तक भरते है, ताकि सिंचाई के बाद समतल हो जाएं।

* दीमक के बचाव के लिए क्लोरोपायरीफॉस की 50 मिलीलीटर मात्रा प्रति गड्ढा मिलाएं।

* गड्ढे की खुदाई के समय आधा मीटर गहराई तक की मिट्टी एक तरफ तथा निचली आधी गहराई की मिट्टी दूसरी तरफ डालते है तथा भरते समय ऊपर की मिट्टी नीचे तथा नीचे वाली मिट्टी खाद मिला कर ऊपर भर देते हैं।

* उद्यान के पश्चिम तथा उत्तर दिशा में लू तथा शीत लहर से बचाव के लिए वायुरोधक पौधों का रोपण करें।

* रोपण के समय पौधे की पिण्डी को अच्छी तरह दबा सिंचाई करें।

* पौधों को मिट्टी की पिंडी से थोड़ा अधिक गाढ़ना चाहिए।

* अच्छे परागण के लिए परागणकर्ता पौधों का भी रोपण करें।

* रोपण के बाद तुरंत सिंचाई करें तथा कुछ समय बाद नियमित आवश्यकता अनुसार सिंचाई करें।

* पौधों को विश्वसनीय, रजिस्टर्ड तथा स्थानीय नर्सरी से ही खरीदें।

* नर्सरी का भ्रमण करके पहले पौधों की प्रजातियों की जानकारी प्राप्त करें, उसके बाद उपयुक्त प्रजाति का चुनाव करें। पहले कभी प्रजाति का नाम स्वयं ना बताएं।

* अच्छी किस्म के अधिक पैदावार देने वाली कलमी पौधों का चुनाव स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप करें तथा पौधों को पहले से बुक करवाएं।

* नर्सरी में लंबे समय से रखे गए अधिक उम्र के कलमी पौधों को कदापि ना खरीदें।

* नर्सरी से तुरंत निकाले गए तथा जड़ कटे हुए पौधों को कभी नहीं खरीदना चाहिए।

* कलमी पौधों की शाख की उम्र 1-2 वर्ष से अधिक ना हो तथा बढ़वार अवरूद्ध ना हुई हो।

* मूल-वृंत तथा शाख का जोड़ स्पष्ट तथा अधिक ऊंचाई पर ना हो।

* वानस्पतिक विधियों द्वारा पौधे तैयार करने की तकनीकी जानकारी होनी चाहिए ताकि पौधों का कलमी रूप पहचानने में आसानी रहे।

* कीट व बीमारियों से मुक्त शक्तिशाली एवं पॉलीथीन बैग में तैयार पौधों को वरीयता दें।

* नर्सरी से पौधों को उठाने के 1-2 दिन पहले सिंचाई करें तथा सदाबहारी पौधों की कुछ पत्तियां तोड़ कर वाष्पोत्सर्जन को नियंत्रित कर सकते हैं।

* सदाबहारी पौधों की मिट्टी के गोले के साथ तथा पर्णपाती पौधों को सुषुप्त काल में किसी तरह निकाला जा सकता है।

* मिट्टी (अर्थ बॉल) का गोला अच्छी तरह घास, मूंज या कांस में बंधा होना चाहिए।

* यातायात के समय पौधों को टोकरियों में या सीधे लाद कर लायें।

* वाहन में पौधों को लादते समय सुरक्षित रखते हुए अर्थ बॉल को ना टूटने दें।

* अगर रास्ता लम्बा हो तो ट्रक आदि पर रखे गए पौधों को बीच में पानी दें तथा दिन के समय तेज़ धूप में छाया कर सकते हैं।

खरगोश पालन में महत्वपूर्ण बातें

आवास प्रबंधन : खरगोश की तीन अलग-अलग आवास प्रणालियों में पाला जा सकता है :

1. केज सिस्टम : * यह प्रणाली आमतौर पर अर्ध-वाणिज्यिक और वाणिज्यिक खरगोश उत्पादन में प्रयोग होती है, जहां खरगोशों को पिंजरे में पाला जाता है।

* शैड का आकार जानवरों की संख्या पर निर्भर करता है।

* पिंजरों को एकल या स्तरीय प्रणाली में पंक्तियों में व्यवस्थित किया जाता है।

* पिंजरे का सामान्य आकार 2.5 फीट × 2 फीट × 2.5 फीट का होता है।

* किंडलिंग (बच्चे देने की प्रक्रिया) के लिए पिंजरा थोड़ा बड़ा होना चाहिए (4 फीट × 3 फीट)।

* पिंजरों की प्रत्येक पंक्ति के तहत उचित जल, गोबर, मूत्र आदि की निकासी के लिए निकासी व्यवस्था होनी चाहिए।

2. हैच सिस्टम : * यह स्व-निहित पिंजरा है, जिसे आवश्यकता पड़ने पर दूसरे को एक स्थान से स्थानांतरित किया जा सकता है।

* हैच को लकड़ी, बांस या लोहे की फ्रेम की मदद से बनाया जा सकता है।

* छत घास की, जी.आई. शीट की हो सकती है।

* प्रत्येक डिब्बे का आकार 3.5 फीट × 3 फीट × 3.5 फीट हो सकता है।

* हैच में 2-8 डिब्बे हो सकते हैं।

* यह प्रणाली खरगोशों के घर आंगन पालन के लिए उपयुक्त है।

3. फ्लोर (फर्श) सिस्टम : * इस प्रणाली में खरगोशों को फर्श पर मुर्गे की तरह रखा जाता है, लेकिन फर्श को सीमेंट कंक्रीट के रूप में बनाया जाना चाहिए।

* विभिन्न प्रकार के खरगोशों को रखने के लिए घर का विभाजन किया जा सकता है, जैसे उत्पादक, फ्रायर, वयस्क नर और मादा आदि।

* प्रति खरगोश लगभग 4 वर्ग फीट की जगह की आवश्यकता है।

* हालांकि, उच्च नमी और बारिश क्षेत्र में इस प्रणाली की सलाह नहीं दी जाती है।

प्रजनन प्रणाली और प्रबंधन :

प्रजनन : * खरगोश 6-7 महीने की उम्र में परिपक्वता प्राप्त करते हैं।

* संभोग के लिए मादा खरगोश को नर खरगोश के पास पिंजरे में ले जाना होता है।

* सुबह या शाम को संभोग करवाया जाता है। एक ही दिन में सुबह और शाम को दो संभोग की अनुमति देना बेहतर होता है।

* सफल संभोग के बाद नर खरगोश आमतौर पर एक ठेठ कराह ध्वनि के साथ मादा के दाईं या बाईं ओर से नीचे गिरता है।

* खरगोश में गर्भावस्था की अवधि 30-31 दिन की है।

* नवजात शिशुओं के लिए घौसला तैयार करने में मादा खरगोश को गर्भावस्था के 25वें दिन पर सूखी साफ बिस्तर सामग्री, जैसे घास/धान की फक उपलब्ध करवाया जाना चाहिए।

* एक मादा खरगोश 6-12 की संख्या में युवा को जन्म देती है।

* प्रत्येक मादा प्रति वर्ष, उचित योजना के माध्यम से 4-5 बार बच्चे प्राप्त किए जा सकते हैं।

* किंडलिंग अंतराल 2 महीने है।

* एक खरगोश को 3-4 साल तक पाला जा सकता है।

* नर और मादा अनुपात 1:10 है।

नवजात शिशु की देखभाल : * नवजात खरगोश अपने शरीर पर किसी भी बाल से रहित होते हैं और 9-10 दिनों तक अंधे होते हैं।

* वे 4वें दिन से बाल विकसित करना शुरू कर देते हैं।

* मां समय-समय पर अपने बच्चों को दूध पिलाती है।

* मृत बच्चों की समय-समय पर जांच और गंदे बिस्तर की सफाई को छोड़ कर अधिक देखभाल की आवश्यकता नहीं होती है।

* लगभग 20 दिनों से युवा फीड को निपटना शुरू करते हैं।

माँ से अलग करने का उचित समय : * उनकी वृद्धि और फीड लेने की क्षमता के आधार पर, युवा अपनी माँ से 30 से 42 दिनों के बीच अलग हो सकते हैं (जिसे कहा जाता है 'वीनिंग')।

* सभी युवाओं को हमेशा साथ रखने की सलाह दी जाती है।

* वीनिंग के कुछ दिन बाद और फिर धीरे-धीरे उन्हें व्यक्तिगत पिंजरे में अलग कर दें।

* युवाओं की सेक्सिंग और नंबरिंग वीनिंग के समय की जाती है।

खरगोश के लिए चारा व्यवस्था : * घर आंगन में पलायन होने वाले खरगोशों में पाले गए खरगोशों को उपलब्ध रसोई से बचा हुआ खाना, सब्ज़ियों और घास के साथ प्रबंधित किया जा सकता है।

* लेकिन अर्ध-वाणिज्यिक और वाणिज्यिक खेतों के लिए जहां एक बड़ी जानवरों की संख्या रखी गई है, संतुलित फीड आवश्यक है। हालांकि उन्हें गुणवत्ता वाला चारा, फसलें, हरी फलियां देकर 40-50 प्रतिशत फीड कम किया जा सकता है।

* पानी को दिन-रात दिया जा सकता है।

विभिन्न आयु वर्ग द्वारा दैनिक फीड की आवश्यकता :

* वीनर (45-70 दिन) - 50 ग्राम प्रति दिन

* उत्पादक (71-90 दिन) - 75 ग्राम प्रति दिन

* उत्पादक (91-120 दिन) - 100 ग्राम प्रति दिन

* वयस्क (121 दिन) - 120 ग्राम प्रति दिन

हरे चारे की उन्नत खेती

भारत दूध उत्पादन के क्षेत्र में विश्व में अग्रणी देश बन गया है, लेकिन हमारे देश में प्रति पशु दूध उत्पादन की मात्रा विकसित देशों की तुलना में बहुत कम है। इसका मूल कारण पशुओं के कुपोषण, पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता से कम मात्रा में उपलब्धता और बांझ पशुओं की बाहुल्यता आदि है।

पशुओं का अच्छा चारा एवं दाने की आवश्यकता को पूरा न कर पाने के कारण उनकी आनुवांशिक क्षमता का पूरा लाभ नही ले पा रहें है। इस समय हमें 1136 मिलियन टन हरे चारे और 949 मिलियन टन सूखे चारे की आवश्कता है, जबकि वर्तमान में इसकी केवल 47 प्रतिशत मात्रा की ही उपलब्धता है। इस प्रकार हमारे देश में पशुधन के सामने चारे की कमी एक विकट समस्या है।

चारे के लिए उपयुक्त भूमि :- अधिकांश चारा फसलें सभी प्रकार की भूमि में सफलतापूर्वक उगायी जा सकती है, परंतु अधिक पैदावार लेने के लिए उचित जल निकास वाली हल्की लवणीय या क्षारीय भूमि अच्छी रहती है। यदि मिट्टी अम्लीय हो तो उसमें 10 टन चूना प्रति हैक्टेयर की दर से डाल देना चाहिए। क्षारीय एवं लवणीय भूमि को सुधारने के लिए 15-20 टन जिप्सम प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करें। प्रयोगों में देखा गया है कि भूमि सुधारक रसायनों का प्रयोग यदि हरी खाद के साथ किया जाये तो चारे की पैदावार में काफी मात्रा में वृद्धि हो जाती है।

हरा चारा खिलाने की आवश्यकता :- देश में बढ़ती हुई खाद्यान्न आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए एक ओर तो चारा फसलों के कुल क्षेत्रफल 63 मिलियन हैक्टेयर हैं। इस क्षेत्रफल में वृद्धि करना संभव नहीं है। वहीं दूसरी ओर पशुओं से प्राप्त होने वाले दुध उत्पादन में आवश्यक है, क्योंकि हरे चारे में प्रर्यास मात्रा मे प्रोटीन, खनिज लवण एवं विटामिन होते है, जो पशुओं के शरीर को स्वस्थ्य बनाये रखते हैं।

मृदा संरक्षण के लिए जैविक खादें :-

भूमि सुधारक रसायनों के प्रयोग से मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक दशाओं में सुधार होता है। चारा फसलों की बुवाई से पूर्व खेतों में 1-2 गहरी जुताई करना अति आवश्यक है। जिससे सिंचाई व बरसात का पानी आसानी से भूमि में संरक्षित हो सकें। इसके अलावा 15 से 20 टन अच्छी सड़ी गोबर की खाद बुवाई से 20-25 दिन पूर्व खेत में डालकर देशी हल या कल्टीवेटर से अच्छी तरह मिलाने के बाद पाटा लगा देना चाहिए। इससे मिट्टी में नमी का संरक्षण होगा और मिट्टी को भी अच्छी जैविक खाद उपलब्ध हो सकेगी।

चारे की बुवाई तथा बीज दर :- चारा फसलों की बुवाई का उचित समय जुलाई के प्रथम सप्ताह से अगसत के प्रथम सप्ताह तक रहता है। रबी में बोई जाने वाली चारा फसलों की बुवाई संरक्षित नमी पर अक्तूबर के प्रथम सप्ताह से 15 नवंबर तक पूरी कर लेनी चाहिए। बुवाई से पूर्व गोबर की पुरानी खाद 5 से 10 टन प्रति हैक्टेयर की दर से मिट्टी में मिला देनी चाहिए। चारा फसलों में फास्फोरस तत्वों की पूर्ति के लिए बुवाई से 2-3 दिन पहले 80 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से डाई अमोनियम फास्फेट उर्वरक को हल से बने कुंडों में 5-6 सै.मी. की गहराई पर देना उचित पाया गया है। जिससे कि फास्फोरस के साथ नाइट्रोजन की मात्रा की पूर्ति सुनिश्चित हो सकें। मिश्रित करके चारा बीजों को 1.1 या 2. 2 के निश्चित् अनुपात में बुवाई मात्रा में से न केवल अधिक चारा मिलेगा, बल्कि इस प्रकार की पद्धति से अच्छी गुणवत्ता का भी चारा मिलेगा। घास व दलहनी प्रजाति के चारे के बीजों को मिश्रित करके बोने से पोषक तत्वों की मात्रा में वृद्धि हो जाती है और पशु भी चारा चाव से खाते हैं। इसके अलावा मिश्रित चारे में पाचकता एवं स्वादिष्टता भी बढ़ जाती है। साधारणत या बुवाई में बीज दर, बीज के आकार, अकुरंण क्षमता व बीज की शुद्धता पर निर्भर करती है। चारा फसलों हेतु बीज दर खाद्यान्न एवं अन्य फसलों की तुलना में अधिक मात्रा में रखी जाती है, क्योंकि इसमें पौधों की संख्या प्रति एकड़ ज्यादा होती है। घास प्रजातियों में मुख्य चारा फसलें जैसे बाजरा, ज्वार व उन्नशील घासों इत्यादि की बीज दर क्रमशः 10-12,ज40-50 व 5 से 7 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर रखते है। मोटे दाने वाली चारा फसलें जैसे मक्का, जौं और जई की बीज दर क्रमशः 30-40, 100-125 और 125 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर रखी जा सकती है। दलहनी चारा फसलों की बीज दर घास प्रजातियों की चारा फसलों की तुलना में अधिक रहती है। फिर भी कुछ घास प्रजाति की फसलें व दलहनी चारा फसलों की बीज दर समान रखी जा सकती है। दलहनी चारा फसलों में मुख्य रूप से लोबिया, ग्वार, बरसीम, रिजका, सैम और तितली मटर इत्यादि आती है। इनकी बीज दर क्रमशः 30-40, 40-50, 25-30 व अन्य सभी बची हुई दलहनी चारा फसलों की 20-25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर रखा जाना चाहिए।

अधिक चारा उत्पादन संबंधी चारा फसलों की उन्नत किस्में	
फसल	**किस्में**
बरसीम	वरदान (एस-99-1) बी.एल.-2, जेबी 1, 2 व 3
रिजका	टी-9, चेतक, सिरसा-8, आनन्द-2
लोबिया	कोहिनूर (एस-450), ई.सी.-4216, के.-397, राश्पिनजाइंट
जई	कैट इगफ्री 2688, जे.एस.ओ.-817 यू.पी.ओ.94
जौं	आर.डी.-2503, आर.डी.-2508
ज्वार	हरा सोना, एस.डी.-2, एम.पी.चरी., पूसा चरी-23, पूसा चरी-6, राजस्थान चरी-1 व 2, पाइनियर, पी.जी.-3036
बाजरा	एस.बी.-1, एस.बी.-2, बीजे-104, बाजरा जाइंट, राजको एल-72
मक्का	अफ्रीकन टॉल, विजय कंपोजिट, मोती, मंजरी, ज्वाहर कंपोजिट, गंगा-2
नेपियर	एन.बी.-21, पूसा नेपियर-1, पूसा नेपियर-2, गजराज पूसा जांइट, स्वेतिका-1 (हारब्रिड-3)
दनिनाथ घास	इगफ्री-3808, बुन्देल-1, बुन्देल-2 (4-2-1)
अजन घास	इगफ्री-3108, (इगफ्री 4-3-1)
सिराट्रो	इगफ्री (एस.-1)
ग्वार	एफ.एस.-277, ग्वार न.2, आर.जी.सी.-936, सिरसा-2, एच.एफ.सी.-119, दुर्गा पुरा सफेद
सेंजी	सेंजी-76, एस.ओ.एस.-1

नत्रजन संरक्षण/मृदा संरक्षण :- खाद एवं उर्वरक ही फसलों का भोजन होता है। फिर भी खाद्यान्न और नकदी फसलों की अपेक्षा चारा फसलों में जैविक तत्वों की केवल आधी मात्रा में ही आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन की मात्रा दलहनी फसलों में अधिक होती है, जबकि फास्फोरस की आवश्यकता ठीक इसके विपरित है, क्योंकि दलहनी फसलों की जड़ों में गांठें बनती है, जो वायुमंडलीय नाइट्रोजन की स्थिरीकरण कर देती है। फास्फोरस की आवश्यकता जड़ों के विकास के लिए आवश्यक मानी गयी है। क्योंकि वे जड़ों को अधिक गहराई तक ले जाने में मदद देती है। इस प्रकार अधिक से अधिक मात्रा में जैविक तत्वों एवं पानी को मिट्टी में संरक्षित किया जा सकता है।

उन्नत चारा प्रजातियों का चयन :- वर्तमान में हरे चारे की मांग बढ़ने से पशुपालकों का ध्यान उन्नत चारा प्रजातियों की ओर खिंचता जा रहा है, क्योंकि आनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन वैज्ञानिकों ने इस क्षेत्र में काफी उन्नत चारा फसलों की प्रजातियां विकसित की है। इनकी चारा उत्पादन क्षमता पारंपरिक प्रजातियों की तुलना में कई गुनी अधिक है। इसके अलावा इनमें कम समय में शीघ्र बढ़वार क्षमता होने से अधिक मात्रा में एवं जल्दी हरा चारा मिल जाता है। इसके साथ ही कटाई वाली किस्मों का विकास होने के प्रति इकाई क्षेत्रफल पर अधिक हरा चारा लेने में महत्वपूर्ण सफलता भी प्राप्त की जा सकती है।

चारे के क्षेत्रफल में कमी :- जनसंख्या के कृषि भूमि पर बढ़ते निरंतर दबाव के कारण गत कई दशकों से चारा फसलों के अंतर्गत अच्छादित क्षेत्रफल कम होता जा रहा है, परंतु उन्नतशील किस्मों के विकास होने से उसी क्षेत्र में हरे चारे की पैदावार दो से तीन गुनी बढ़ गयी है। इससे चारे की समस्या का समाधान कुछ सीमा तक ही हो पाया है, क्योंकि पशुओं की संख्या में भी लगातार वृद्धि हो रही है। इसलिए अभी भी चारे की उपलब्धता में अधिक वृद्धि लाना आवश्यक है। इस चुनौती का सामना करने के लिए हमें उन्नतशील किस्मों के चारे की खेती में प्रयोग में लाने के साथ-साथ अन्य विकसित प्रौद्योगिकी को भी प्रयोग में लाना होगा। ऐसी प्रौद्योगिकी राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा), भारतीय चारा एवं घास अनुसंधान संस्थान झांसी (उ.प्र.) तथा पंजाब व हरियाणा कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा विकसित की गई है।

चारे की मिश्रित खेती से उपज :- प्रायः यह देखा गया है कि वर्षा के ऊपर निर्भर होने के कारण पशुपालक खरीफ मौसम में ही चारे को अधिक उगाते हैं। कुछ क्षेत्रों में चारे की फसलों को मिलवां (घास दलहनी) फसलों के रूप में भी उगाया जाता है। इससे प्रति इकाई क्षेत्रफल पर फसलों से अधिक हरा चारा उपलब्ध होता है। दलहनी फसलों में प्रोटीन की मात्रा बढ़ने से हरा चारा ओर भी अधिक पौष्टिक एव स्वादिष्ट हो जाता है। जिसे पशु बड़े चाव से भर पेट खाते है। परिणामस्वरूप उनकी उत्पादकता में वृद्धि होती है तथा दूसरा फायदा यह होता है कि दलहनी फसलों में जीवाणु ग्रंथियां बनती है, जो वायु मंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करके पौधों को उपलब्ध कराती है। मृदा की उर्वरा शक्ति नष्ट नहीं होती है।

फसल चक्र	हरे चारे की पैदावार टन/हैक्टेयर/वर्ष
नेपियर+बाजरा+कवेलवेट बीन+बरसीम+सरसों	122.60
दीनानाथघास+बरसीम+मक्का+लोबिया	200.90
नेपियर+बाजरा हाइब्रिड+लोबिया	211.70
नेपियर+बाजरा हाइब्रिड+लोबिया	255.00
नेपियर+बाजरा हाइब्रिड+ग्वार-रिजका	252.90
ज्वार+लोबिया-मक्का+लोबिया	110.70

उन्नत फसल चक्र :- साल भर हरा चारा उपलब्ध करवाने के लिए उचित फसल चक्र अपनाना चाहिए। इससे फसलों की संख्या में बढ़ोत्तरी करके प्रति हैक्टेयर क्षेत्रफल पर उगायी गयी चारा फसलों की उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है। घास कुल की प्रजातियों की चारा फसलों के बाद दलहनी चारा फसलों को फसल चक्र में रखने से अच्छी किस्म का अधिक चारा प्राप्त हो सकता है तथा यदि पशुपालक चारे की सघन उत्पादन पद्धतियों का प्रयोग करें तो चारे की फसलों में अच्छी आमदनी प्राप्त की जा सकती है।

कटाई का समय :- चारा फसलों की कटाई फूल आने के समय में ही करनी चाहिए, क्योंकि इस अवस्था में पोषक तत्व सबसे अधिक मात्रा में होते हैं। चारा फसलों की कटाई में देरी होने के कारण ज्यादातर पत्तियां पीली पड़कर झड़ जाती है, जिससे काफी मात्रा में चारा बेकार होकर नष्ट हो जाता है। तना एवं शाखाओं में कठोर रेशों का निर्माण होने से पाचकता एवं पोषकता दोनों की कमी होने के कारण रेशों वाले चारे को पशु कम पसंद करता है।

चारे की पैदावार			
चारे का नाम	**कटाई संख्या**	**हरा चारा (क्विं./है.)**	**प्रोटीन प्रतिशत**
जौं	1	300-350	10.50
जई	1	300	11.00
राई घास	2	150-200	11.00
धामन घास	2	100-125	10.20
नेपियर घास	2.3	150-200	10.40
ज्वार	2	400-500	10.50
मक्का	1	350-400	10.00
बाजरा	1	300-350	11.60
ग्वार	1	200-250	18.10
वरसीय	4.5	600-700	18.70
रिजका	3.4	450-550	22.76
लोबिया	1	200-250	23.40

यदि घास कुल की प्रजातियों वाली चारा फसलें बहुकटाई वाली हो तो इनकी कटाई वर्ष में कई बार ली जा सकती है। इसलिए इनकी कटाई भूमि की सतह से 10-15 सै.मी. की ऊंचाई से करनी चाहिए। प्रत्येक कटाई के बाद कुल निर्धारित नाइट्रोजन की मात्रा का एक चौथाई भाग देकर अधिक पैदावार की जा सकती है। दलहनी बहुवर्षीय चारा फसलों से भी अधिक कटाई लेना संभव है। इसलिए इनकी कटाई करते समय कटाई की ऊंचाई 15-20 सै.मी. तक रखना अति आवश्यक है। इससे अगले वर्ष चारे की अच्छी पैदावार मिल सकेगी।

चमेली की उपयोगिता एवं व्यावसायिक खेती

फूलों के उत्पादन के आधार पर तमिलनाडु का देश में पहला स्थान है। शहरीकरण विकास के साथ इस क्षेत्र में तरक्की की प्रबल संभावनाएं हैं। ऐसे में किसान भाईयों को चाहिये कि पुष्पों की खेती में वैज्ञानिक तकनीक अपनाकर उससे अधिक उत्पादन कर लाभ कमाएं।

संतोष कुमार बेक, सूर्यमणी साहनी, मनोज कुमार बेक
और देवी सिंह, सरगुजा (छत्तीसगढ़)

आज का दौर कृषि विविधीकरण का है, देश के विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्रों के लिये उद्यानिकी फसलें सबसे उपयुक्त हैं। उद्यानिकी फसलें विशेषकर पुष्पों की खेती देश के सभी हिस्सों में की जाती है। भारत सरकार की नीतियां भी इसे प्रोत्साहित कर रही हैं। ऐसे में आवश्यक है कि विश्वविद्यालयों में भी इस पर गहन अनुसंधान कर किसानों के लिए पुष्प फसलों द्वारा आमदनी बढ़ाने की तकनीकी का प्रसार किया जाये।

चमेली एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक पुष्प है, जिसका उपयोग माला बनाने, धार्मिक अनुष्ठानों, शादी-विवाह आदि में भरपूर रूप से होता है। इसके अलावा भी अन्य कार्यक्रमों में सजावट के लिए इसका उपयोग किया जाता है।

चमेली के पुष्पों का अपना विशेष महत्व है। इसके फूलों से इत्र व खुशबूदार तेल तैयार किया जाता है और अगरबत्ती के उत्पादन के साथ ही इसके औषधीय गुणों का उपयोग भी बहुतायत में भारत में प्राचीनकाल से किया जाता रहा है।

जड़ का आयुर्वेदिक उपयोग :- पेशाब में जलन की शिकायत के लिये चमेली की जड़ को बकरी के दूध के साथ उबालकर उसमें शक्कर मिलाकर पीने से राहत मिलती है और यह पथरी रोग के लिये भी लाभदायक है। साथ ही लकवा, मंद बुद्धि, पाचन शक्ति में कमी, प्रजनन क्षमता में कमी, दाद-खाज खुजली, कुष्ठ रोग एवं त्वचा संबंधी रोगों में चमेली की जड़ें अत्यंत लाभकारी होती हैं।

पत्तियों का आयुर्वेदिक उपयोग :- चमेली की पत्तियों को चबाने या पत्तियों का जूस पीने से दांत का दर्द, मुंह का छाला एवं अमाशय संबंधी रोगों में राहत मिलती है। साथ ही त्वचा संबंधी रोग एवं जले-काटे स्थान पर इसकी पत्तियों का उपयोग लाभदायक होता है।

चमेली के तेल का आयुर्वेदिक उपयोग :- चमेली के तेल के उपयोग से बालों का झड़ना रूकता है एवं यह आंखों की रोशनी बढ़ाने में सहायक है। कान के पकने को रोकने के लिये चमेली की पत्तियों के जूस को चमेली के तेल में पकाकर कान में डालने से कान का पकना ठीक होता है।

फूलों का उपयोग :- चमेली का सूखा पुष्प नसिका से रक्त स्त्राव को रोकता है और त्वचा संबंधी रोगों के लिये उपयोगी होता है। महिलाओं में स्तन कैंसर की रोकथाम के लिये चमेली का फूल अत्यंत लाभकारी होता है।

मृदा एवं जलवायु :- गर्म ग्रीष्म, मध्यम शरद ऋतु एवं मध्यम वर्षा ऋतु इसकी बागवानी के लिए

सर्वोत्तम है । जिन स्थानों पर पानी लंबे समय से ठहरा हुआ हो वहां चमेली की फसल को नहीं उगाना चाहिये, क्योंकि इससे जड़तंत्र बुरी तरह प्रभावित होता है। इसके फलस्वरूप उपज में भारी कमी हो जाती है।

चमेली के पुष्पों के लिये उपजाऊ दोमट अथवा बलुई दोमट मिट्टी जिसका पी-एच मान 6.5 से 7.5 के बीच हो, उपयुक्त रहती है।

चमेली की प्रजातियों :- कोयम्बटूर-2, अर्का सुरभि।

*** कोयम्बटूर-1 :-** यह किस्म लूज फ्लावर उत्पादन और तेल उत्पादन के लिये बहुत उपयुक्त है। इसके फूलों का औसत उत्पादन 10 टन प्रति हैक्टेयर होता है।

*** कोयम्बटूर-2 :-** यह किस्म कोयम्बटूर-1 किस्म से प्रेरित उत्परिवर्तित (म्यूटेंट) किस्म है। इसका औसत उत्पादन अधिक होता है।

*** प्रवर्धन :-** टर्मिनल छोटी टहनियों की कटिंग (12 से 15 सैं.मी.) अत्यधिक उपयुक्त मानी जाती है। टहनियों के अंतिम कटे सिरे को तुरंत आईएए या आईबीए 1000 पीपीएम घोल में डुबोकर लगाने से जड़ें अच्छी आती हैं। अच्छी जड़ें लाने के लिये केंचुआ खाद, काई और बालू का समान अनुपात 1:1:1 का माध्यम बेहतर होता है।

भूमि की तैयारी :- भूमि अच्छी जल निकास वाली होनी चाहिये और साथ ही सिंचाई की उपयुक्त व्यवस्था होनी चाहिये। सूर्य के प्रकाश की व्यवस्था भी पर्याप्त होनी चाहिये। पौधे लगाने से एक माह पूर्व गड्ढे की खुदाई कर लेनी चाहिये। गड्ढे में समान अनुपात में बालू और मिट्टी मिलाकर पौधों की रोपाई करनी चाहिए। पौधा लगाने से पूर्व अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद 10 कि.ग्रा. प्रति पौधा मिट्टी व बालू में मिलाकर देनी चाहिए।

रोपण दूरी :- विभिन्न शोधों से पता चलता है कि अधिक पादप घनत्व से ज्यादा पुष्प उत्पादन नहीं लिया जा सकता। अत: पौधे से पौधे की दूरी 2 मीटर और कतार से कतार की दूरी 1.5 मीटर होनी चाहिये। इससे प्रति हैक्टेयर 3,350 पौधों का रोपण किया जा सकता है और पुष्प उत्पादन भी अधिक होता है।

रोपण समय :- चमेली के फूलों को लगाने का सबसे उत्तम समय भारत के अधिकतम हिस्सों में मौनसून का समय होता है, लेकिन जून से नवंबर तक भी रोपण किया जा सकता है।

खाद व उर्वरक :- चमेली के पौधों को दो खुराक में उर्वरक देनी चाहिये। पहली जून-जुलाई और दूसरी बाद छंटाई के बाद दिसंबर में डालनी चाहिये। अत्यधिक उर्वरक डालने से शाख का विकास अधिक होता है, जिससे गुणवत्ता में कमी आती है और फूलों की संख्या में भी कमी आती है। फूलों के अधिक उत्पान के लिये जिंक 0.25 प्रतिशत और मैग्नीशियम 0.5 प्रतिशत फूल आने से पहले छिड़काव करना चाहिये।

सिंचाई :- रोपण के तुरंत बाद पहली सिंचाई करनी आवश्यक है। सामान्यत: सप्ताह में एक बार या 10 दिनों में एक बार सिंचाई करना उपयुक्त होता है।

कटाई-छंटाई :- चमेली के फूलों की अच्छी पैदावार के लिये पौधों की कटाई-छंटाई करनी जरूरी है। इसलिये दिसंबर के अंतिम सप्ताह में पौधों को भूमि की सतह से 45 सैं.मी. की ऊंचाई से काट देना चाहिये। कटाई-छंटाई के साथ ही पौधे के किनारे की मिट्टी को हटाकर 10 से 12 दिनों के लिये खुला छोड़ देना चाहिये। तत्पश्चात 10 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर या कंपोस्ट खाद मिलाकर गड्ढे भरने के बाद सिंचाई करनी चाहिये।

खरपतवार नियंत्रण :- सामान्यत: खरपतवार नियंत्रण हाथों से किया जाता है, किन्तु यह खर्चीला होता है। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण प्रभावी एवं सस्ता होता है। ओराईजा-लाईन का छिड़काव एक या दो बाद करना चाहिये। पलवार भी खरपतवार की अधिकता को कम करती है।

चमेली के फूलों की उपज :- चमेली के फूलों से आर्थिक लाभ पौध लगाने के तीन वर्ष बाद से 15 वर्ष तक होता है। उसके पश्चात उत्पादन में कमी आने लगती है। फूलों की तुड़ाई कब करें, यह उसके उद्देश्य पर निर्भर करता है। पूरी तरह खिले हुये फूल या फूलों की कल्लियों की तुड़ाई सुबह जल्दी कर लेनी चाहिये, जबकि चमेली के तेल उत्पादन के लिये पूरी तरह से खिले हुए फूल अधिक उपयुक्त होते हैं। फूलों की तुड़ाई सुबह 11 बजे के बाद करने से उपज व गुणवत्ता में भारी कमी आती है। चमेली के फूलों का उत्पादन 4,329 से 10,144 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर तक प्राप्त किया जा सकता है।

पौध सुरक्षण :- चमेली में लगने वाले रोगों व कीड़ों से बचाव यदि समय पर न किया गया तो फूलों के उत्पादन में 40 से 45 प्रतिशत की कमी आ सकती है। इसमें लगने वाले रोग व कीट निम्न है :

पत्ती झुलसा :- लाल-भूरा धब्बा पत्ती की ऊपरी सतह में दिखाई देता है।

नियंत्रण :- बेनलेट 0.4 प्रतिशत, बाविस्टिन 0.1 प्रतिशत या बोर्डेक्स मिक्स्चर एक प्रतिशत समान रूप से प्रभावी है।

मुरझान :- पौधे की निचली पत्तियां पीली पड़ते हुये ऊपर की ओर बढ़ने लगती हैं और अंत: में मरने लगती है।

नियंत्रण :- पौधे की गोलाई में हल्की खुदाई करके बोर्डेक्स मिक्स्चर एक प्रतिशत का छिड़काव करने से इसका नियंत्रण किया जा सकता है।

कलीबेधक :- कलीबेधक कीट का हरे रंग का लार्वा होता है और काले रंग का सुंडी होती हैं, जो अपरिपक्व फूलों की कल्लियों को भेदकर कुतर जाता है।

नियंत्रण :- मोनोक्रोटोफॉस 2 मि.ली. प्रति लीटर का छिड़काव करने से कलीबेधक की रोकथाम की जा सकती है।

लाल मकड़ी :- इसका प्रकोप गर्म और सूखे मौसम में विशेषकर ग्रीष्म ऋतु में अधिक होता है। लाल मकड़ी चमेली की पत्तियों की निचली सतह को खाते हुये देखी जाती है, जिससे पत्तियों पीली पड़कर गिर जाती है।

नियंत्रण :- थाईमेट 2 ग्राम प्रति लीटर का छिड़काव 5 बार दस-दस दिनों के अंतराल में करना चाहिये, जिससे लाल मकड़ी से निजात पाई जा सकती है।

सूत्रकृमि :- मृदा परीक्षण कर 10 ग्राम टेमिक-जी पौधे के जड़ क्षेत्र में डालना चाहिये तत्पश्चात सिंचाई कर देनी चाहिए।

व्यापार वितरण और परिवहन :- चमेली के फूलों का परिवहन वातानुकूलित ट्रक, शिप अथवा वाहन में करना चाहिये। लंबी दूरी के परिवहन के लिए बांस के बास्केट में नम मलमल के कपड़े में फूलों को रखना चाहिये। इससे फूलों का ताजा व सुरक्षित रखा जा सकता है।

पैकिंग :- * तोड़े हुये चमेली के फूलों का पैकिंग के पूर्व शीतल उपचार किया जाना चाहिये।

* पैकिंग आर्थिक दृष्टि से सस्ती, परिवहन में सुविधाजनक और टिकाऊ व आकर्षक होनी चाहिये। यह लंबी दूरी के बाजार के लिये अच्छी होती है।

* थोक विक्रेता फूलों को बास्केट में रखते हैं। नमीं नियंत्रण करने के लिये हवा के आवागमन-युक्त पैकिंग करते हैं।

* बास्केट के अंदर अखबार / पेपर से लपेटे हुए फूलों के ऊपर पानी की हल्की बौछार करते हैं।

* तोड़े हुये फूलों की जीवनावधि बढ़ाने के लिये बोरिक एसिड 0.5 प्रतिशत, सुक्रोज एक प्रतिशत, एल्युमिनियम सल्फेट एक प्रतिशत और सिल्वर नाईट्रेट 0.01 प्रतिशत से उपचार करने से फूल 75 घंटे तक ताजे रहते हैं।

चमेली की आयुर्वेदिक उपयोगिताएं

चमेली की आयुर्वेदिक उपयोगिता काफी ज्यादा है, जिसमें जड़, पत्तियों और फूलों का उपयोग किया जाता है। एशिया महाद्वीप व हिन्द महासागर के तटीय भाग में लोक पौराणिक आयुर्वेदाचार्यों के अनुसार चमेली को यकृत में तकलीफ की शिकायत को दूर करने में, पेचिश व विभिन्न प्रकार के दर्द निवारण जैसे मासिक धर्म, त्वचा रोग, कुष्ठ रोग तथा चमेली का तेल त्वचा को मुलायम बनाने, हृदय रोग व कैंसर रोग आदि के निवारण के लिये अत्यंत लाभकारी माना जाता है। चमेली का तेल सुगंध चिकित्सा विज्ञान के अनुसार तनाव से मुक्ति, सिरदर्द व मानसिक चिंता से मुक्त करता है। चमेली के इत्र की खुशबू मस्तिष्क में बीटा तरंग को बढ़ाती है, जो कि मस्तिष्क की सतर्कता क्षेत्र से जुड़ा होता है, इससे मस्तिष्क की गतिशीलता बनी रहती है।

भारत अब किसी पर निर्भर नहीं रहेगा : केंद्रीय कृषि मंत्री शिवराज सिंह चौहान

केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण और ग्रामीण विकास मंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान ने शुक्रवार को बेंगलुरु स्थित भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) के प्रमुख संस्थानों का दौरा कर किसानों, पशुपालकों, वैज्ञानिकों और स्टार्टअप उद्यमियों से सीधा संवाद किया। इस मौके पर उन्होंने किसानों के लिए कई अहम घोषणाएँ कीं और कहा कि भारत अब आत्मनिर्भर होकर कृषि क्षेत्र में नए कीर्तिमान रचेगा।

इंटीग्रेटेड फार्मिंग से बढ़ेगी किसानों की आय

श्री चौहान ने कहा कि सिर्फ गेहूं, धान या गन्ना जैसी पारंपरिक फसलों पर निर्भर रहकर किसान समृद्ध नहीं हो सकते। अब समय आ गया है कि किसान इंटीग्रेटेड फार्मिंग मॉडल अपनाएं। इसमें खाद्यान्न के साथ-साथ दलहन, तिलहन, फल, सब्जियां, फूल, औषधीय पौधे और पशुपालन भी शामिल होंगे। उन्होंने स्पष्ट कहा ''अगर किसानों की जिंदगी आसान बनानी है और उनकी आय बढ़ानी है, तो खेती को विविधता देनी ही होगी।''

पशुओं की बीमारियों पर पहले से मिलेगी चेतावनी

कृषि मंत्री ने बताया कि पशुपालन किसानों की अतिरिक्त आय का सबसे बड़ा साधन है, लेकिन इसमें बीमारियों का खतरा गंभीर चुनौती है। अब आधुनिक तकनीक और डेटा एनालिसिस से संभावित बीमारियों की पूर्व सूचना राज्यों को दी जाएगी, ताकि समय रहते वैक्सीनेशन किया जा सके और किसानों को भारी नुकसान से बचाया जा सके। उन्होंने कहा कि इसी प्रयास से खुरपका और मुंहपका जैसी बीमारियों पर काफी हद तक नियंत्रण पाया गया है।

पेस्टीसाइड पर लगाम, जैविक नियंत्रण को बढ़ावा

श्री चौहान ने राष्ट्रीय कृषि कीट संसाधन ब्यूरो (एन.बी.ए.आई.आर.) के कामकाज की समीक्षा करते हुए पेस्टीसाइड के अंधाधुंध उपयोग पर चिंता जताई। उन्होंने कहा कि रसायन न केवल धरती और मनुष्यों के लिए हानिकारक हैं बल्कि मित्र कीटों को भी नष्ट कर देते हैं। उन्होंने वैज्ञानिकों से जैविक नियंत्रण तकनीकों को तेजी से विकसित कर छोटे किसानों तक पहुंचाने का आह्वान किया।

किसान के खेत से सीखा 'नंजनगुड रसाबले' केले की अनोखी किस्म

दौरे के दौरान श्री चौहान ने किसान श्रीराम के खेत में जाकर नारियल, पपीता, केला और अदरक की मिश्रित खेती देखी। यहां उन्होंने केले की विशेष किस्म 'नंजनगुड रसाबले' के बारे में जानकारी ली। यह किस्म स्वादिष्ट होने के साथ कम शुगर कंटेंट के कारण मधुमेह रोगियों के लिए भी फायदेमंद है। लेकिन हाल के दिनों में इस किस्म पर वायरस का खतरा बढ़ गया है। मंत्री ने भरोसा दिलाया कि विशेष कृषि वैज्ञानिक टीम भेजी जाएगी ताकि यह अनोखी किस्म सुरक्षित रह सके और किसान इसका पूरा लाभ उठा सकें।

भारत मजबूत है, कोई हमें दबा नहीं सकता

कृषि मंत्री ने कहा कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में भारत मजबूत और आत्मनिर्भर बना है। उन्होंने कहा ''हमारे लिए किसानों और पशुपालकों के हित सर्वोपरि हैं। कोई भी ताकत हमें दबाव में नहीं ला सकती। भारत के फैसले भारत ही करेगा।''

कृषि एवं कृषि संबंधित विषयों पर आधुनिक जानकारी लेने हेतु पढ़ें

खेती संदेश

हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र

कृषि एवं कृषि सहायक धंधों की आधुनिक जानकारी से भरपूर

एक वर्ष में 52 अंक

किसान भाईयों व डीलर/डिस्ट्रीब्यूटरों के लिए

चंदों में विशेष छूट

एक वर्ष 300/- रुपए | दो वर्ष 500/- रुपए

KHETI DUNIYAN TID - 62763351

पेमेंट करने के पश्चात् अपना डाक पता इस नंबर पर भेजें : 90410-14575

चंदे भेजने हेतु QR कोड स्कैन करें।

खेती संदेश (कृषि साप्ताहिक)

के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड, पटियाला

नोट: इंडोफिल का लोगो बदले जाने की प्रक्रिया में है. (पैक डिजाइन में बदलाव किए जा सकते हैं)